सिद्ध योग

संस्थापक, सम्पादक तथा संरक्षक

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्र मोहन जी महाराज

वर्ष ३

जनवरी १९७१

वार्षिक मूल्य १० रुपया

अंक १०

इस अंक का मूल्य १ रु०

यदुपते कृपया गृहाण

रत्नाकरस्य गृहं गृहिणी च पद्मा
किं देयमस्ति भवते जगदीश्वराय ।
आभीर वाम नयनाहृतमानसाय
दत्तं मनो यदुपते कृपया गृहाण ॥

अर्थात्—क्षीर (समुद्र) तो आपका घर है, साक्षात् लक्ष्मी जी आपकी पत्नी है, आप स्वयं जगदीश्वर हैं, भला आपको क्या दिया जाय ? किन्तु हे यदुनाथ ! गोप सुन्दरियों ने आपने नेत्र कटाक्ष से आपका मन हर लिया है इसलिये अपना मन आपको अर्पण करता हूं । कृपया इसे ग्रहण कीजिये ।

—सन्त रहीम

श्री सिद्ध गुफा प्रकाशन, सवाई ऐत्मादपुर आगरा

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन
बर्राई-एत्मादपुर
आगरा

संयुक्त सम्पादक
श्री 'दिव्य'

इस अङ्क में

लेख	लेखक	पृष्ठ
१. सज्जनों की संगति	....	१
२. सत्संग एवं सिद्धयोग (हमारा विशेष लेख)	योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहनजी महाराज	२
३. पहुँचोगे किहि देश ?	आचार्य यशोवर्द्धन	७
४. पुनर्जन्म न विद्यते	श्री विजयसिंह एम. एस-सी	९
५. भूत-जय का साधन,	श्री पं० हीरालाल शास्त्री फर्रुखाबाद	१५
६. स्त्रियाँ और योग	श्री उमा शर्मा बी. ए. संगीत, शास्त्री	१९
७. योगेश्वर चरित्र-माला	( )	२५
८. समालखामंडी में योग-प्रचार	हमारे सम्वाददाता द्वारा	३५
९. बुलन्दशहर में योग-प्रचार समारोह		
१०. सचित्र योगासन और उनके लाभ	... ...	४६
११. श्री गुरुदेव जी का कार्य-क्रम	....	५३

ॐ

सिद्ध योग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक पत्र

वर्ष ३ | अङ्क १० | जनवरी १९७१

"ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्'
मर्त्यो मृत्योर्मुख विचरतो, मुक्ति माप्नोति सद्यः।
तस्मात्पश्यन् बहुविधदयन् योगशास्त्रोपदेशान्,
कल्याणानां भवतु महतां सिद्धये 'सिद्धयोगः' ॥

सज्जनों की संगति

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं
सत्सङ्गतिः कथय किन्न करोति पुंसाम् ॥

बुद्धि की मन्दता को हरती है वाणी में सत्यता लाती है, प्रतिष्ठा और अभ्युदय को कराती है, नीच कर्म से पृथक् करती है, चित्त को प्रसन्न करती है, और दसों दिशाओं में कीर्ति फैलाती है, कहीं तो सही सज्जनों की संगति मनुष्य का क्या नहीं करती है ?

हमारा विशेष लेख :—

सत्संग एवं सिद्धयोग

[योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहनजी महाराज]

सत्संग शब्द का क्या अर्थ है, इसके विषय में सर्व साधारण में धारणा है कि जहां पर दस-बीस व्यक्ति मिलकर किसी भी प्रकार का भगवत् गुणानुवाद गायन, भजन-संकीर्तन, कथा, प्रसंग आदि करते हैं, एतावन मात्र क्रिया-कलाप को सत्संग कहा करते हैं। वैसे हमारे शास्त्रों में सत्संग की महिमा बहुत प्रकार से वर्णित है। जगदात्मा अखिल लोक पावन भगवान श्रीकृष्ण ने श्री मद्भागवत के ग्यारहवें स्कन्ध में सत्संग की महिमा को बताते हुए दो श्लोकों में इस प्रकार कहा है :—

न रोधयति मां योगो
न सांख्यं धर्म एव च।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो,
नेष्टा पूर्तं न दक्षिणा॥
व्रतानि यज्ञश्छन्दांसि,
तीर्थानि नियमा यमाः।
यथावरुन्धे सत्संगः
सर्व संगापहो हि माम्॥

भगवान ने पहले पहल 'नरोधयतिमाम् योगः' अर्थात् योग मुझे वश नहीं कर सकता ये शब्द कह करके अपनी प्राप्ति के साधनों में सत्संग की अपेक्षा योग को भी उत्कृष्ट साधन नहीं माना। पाठकगण अपने मन में यह विचार करते होंगे कि पूर्ण-योग योगेश्वर अखिल आत्मा भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी ने योग को अपने मुख से अपेक्षाकृत अपनी प्राप्ति का गौण साधन मान लिया। पर यह बात यथार्थ नहीं है। सत्संग किस वस्तु का नाम है, यह अभी कुछ पंक्तियों के बाद ही हम समझा देना चाहते हैं कि वस्तुतः साधक को सत्संग के द्वारा ही अपने ध्येयभूत योग की प्राप्ति हुआ करती है। भगवान का यह कहना 'न रोधयति माम् योगः' केवल मात्र साधन योग की ओर का ही संकेत है। भक्त लोग भगवान का गुणानुवाद करते हुए प्रायः गाया करते हैं :—

नाहं वसामि वैकुण्ठे,
योगीनाम् हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति,
तत्र तिष्ठामि नारद।

अर्थात् मैं न वैकुण्ठ में रहता हूं और नहीं योगियों के हृदय में रहता हूं। किन्तु जहां पर मेरे भक्त लोग गायन किया करते हैं वहां मैं रहा करता हूं। इसका अभिप्राय यह नहीं समझना चाहिये कि भगवान ने भक्तों के अधीन होकर अपने दिव्य लोक वैकुण्ठ को एवं योगियों के हृदयोंको छोड़ दिया यथार्थ में तो उनके रहने का स्थान उनका वैकुण्ठ लोक एवं हमेशा समाधिस्थ रहने वाले योगियों का

हृदय ही है। किन्तु भक्तों के गायन में भी मेरा उत्कृष्ट आकर्षण है और उनके प्रेम एवं हृदय के भाव से परिपूर्ण उनके गायन में मैं जाया करता हूं यही इसका सांकेतिक अर्थ है, वस्तुतः तो योगियों का हृदय एवं वैकुण्ठ ही उनके निवास का स्थान है। इसी प्रकार से इस श्लोक में उनके अपनी प्राप्ति के जितने साधनों का वर्णन शास्त्रों में किया गया है उन सबको गौण बतला कर सत्सङ्ग को ही प्रमुखता बतलायी गई है। सांख्य शास्त्र का विवेचनात्मक सिद्धांत भगवान को सत्सङ्ग की अपेक्षा प्रिय नहीं है। थोड़ी देर तक हम विचार करलें। इन दो श्लोकों के अन्दर भगवान्मा श्रीकृष्ण ने प्रायः अपनी प्राप्ति के सभी साधनों को न के बराबर गौण बताकर सत्संग की प्रधानता का वर्णन किया है। इन श्लोकों के पहले चरण के अन्दर न 'रोधयति माम् योगः' कह करके योग का गौण रूप से वर्णन किया है। वस्तुतः भगवान श्रीकृष्णचन्द्र के जीवन-चरित्र को हम उठाकर पढ़ें तो उनका पूरा जीवन योगमय है। और उन्होंने अपने प्रत्येक लीला चरित्र से संसार को योग का पाठ पढ़ाया है। उनके जीवन की एक एक घटना यौगिक ऐश्वर्य से परिपूर्ण है। श्री मद्भागवत के इन दो श्लोकों के अतिरिक्त अधिकांश में जितने उन्होंने उपदेश दिये वे सब योग पुरक हैं। और समझने वाले विद्वत्जनों के लिये यह दो और श्लोक ही योग की पूर्णतम् महत्ता को बतलाते हैं। भगवान ने गीता में अर्जुन को योग की महत्ता बतलाते हुए स्पष्ट शब्दों में अर्जुन को आदेश दिया है कि—

तपस्विभ्योऽधिको योगी,
ज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी,
तस्माद्योगी भवार्जुन॥

अर्थात् हे अर्जुन योगी का दर्जा ज्ञानी तपस्वी एवं कर्मकाण्डी सभी की अपेक्षा परमोत्कृष्ट है। इसलिये तू योगी बन।

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव,
दानेषु यत पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा,
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्॥

अर्थात् वेद में, यज्ञ में, तप में, दान आदि में पुण्य फल कहा है योगी उन सब का पूरा-पूरा उल्लंघन करके आदि परम स्थान को प्राप्त हुआ करता है। इसके अतिरिक्त जहां पर सांख्ययोग और योग का वर्णन गीता के अन्दर मिलता है वहां पर भी भगवान ने योग की महिमा का उत्कृष्टता के साथ वर्णन किया है। भगवान ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया है:—

संन्यासस्तु महाबाहो
दुःखमवाप्तम योगतः।
योग युक्तो मुनिर्ब्रह्म,
न चिरेणाधि गच्छति॥

—गीता

अर्थात हे अर्जुन बिना योग के संन्यास को प्राप्त करना बहुत ही कठिन है और योग युक्त मुनि ब्रह्म को बहुत जल्दी पा जाता है।

इसलिये योग ही परम श्रेष्ठ है। अतः हे अर्जुन तुम्हें योग प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिये।

दूसरा साधन आत्म-स्वरूप की प्राप्ति के लिये सांख्य योग का अभ्यास है। और इसका भी संसार में बहुत बड़ा प्रचार है। किन्तु भगवान ने सांख्य शास्त्र के इस विवेचनात्मक सिद्धान्त को भी सत्संग की अपेक्षा नाम मात्र के बराबर गौण बतला दिया।

तीसरा साधन ईश्वर प्राप्ति का स्वाध्याय है। भगवान पतंजलि देव भी अपने योग-दर्शनमें स्पष्ट रूपसे आदेश करते हैं कि—

'स्वाध्यायादिष्ट देवता सम्प्रयोगः'

इस सूत्र का भाष्य करते हुए भगवान पतंजलिदेव की निम्नांकित पंक्ति लिखते हैं :—

देवा ऋषयः सिद्धाश्च,
स्वाध्याय शीलस्य।
दर्शनं गच्छन्ति,
कार्य्यं चास्य वर्तन इति॥

ऋषि मुनि एवं देवता लोग स्वाध्याय शील व्यक्ति की आंखों के सामने आया करते हैं और उनके काम कर दिया करते हैं। हमारे शास्त्र हमें स्पष्ट निर्देश करते हैं :—

स्वाध्यायाद् योगमासीत,
योगात्स्वा ध्यायमामनेत।
स्वाध्याय योग सम्पत्त्या
परमात्मा प्रकाशेत॥

अर्थात् मनुष्य को चाहिये स्वाध्याय के बल से इष्ट देव का साक्षात्कार कर ले और स्वाध्याय से योग की प्राप्ति हो और योग से स्वाध्याय का मनन करें। इस प्रकार स्वाध्याय और योग की सम्पत्ति के द्वारा परमात्मा का प्रकाश हो जाता है। किन्तु जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण ने यहां पर स्वाध्याय की साधना को भी सत्संग की अपेक्षा न के बराबर माना है।

चौथा साधन हमारे शास्त्र बतलाते हैं।

अर्थात् ब्रह्मचर्य और तप के द्वारा देवताओं ने मौत को जीत लिया।

तप से परमात्मा पहचाना जाता है। और तप और स्वाध्याय के द्वारा ही ध्रुव आदिकों ने ही ईश्वर का साक्षात्कार किया किन्तु भगवान ने स्वाध्याय की उत्कृष्ट महिमा बतलाते हुए दोनों श्लोकों में यह कहकर कि तप भी उनको रिझाने का साधन नहीं है। पांचवां त्याग को भी अपनी प्राप्ति का साधना नाममात्र के बराबर ही दिखलाया है। वैसे श्रीमद्भगवद्गीता में :—

त्याग से शाश्वत शान्ति को प्राप्त कर लेता है, यह कह करके त्याग को भी अपनी प्राप्ति का साधन माना है। किन्तु यहाँ पर त्याग भी विशेष करके इन दो श्लोकों में सत्सङ्ग की उत्कृष्टता को समझाया है।

छठा ईष्टापूर्त और दक्षिणा का है। ईष्टापूर्त और दक्षिणा का अर्थ है कुए, बावरी, तालाब आदि बनवाना जिनके द्वारा परम पुण्य की प्राप्ति हुआ करती है। किन्तु जगदात्मा ने इन सभी साधनों को बिलकुल न रूप से माना है। इसके अतिरिक्त बड़े-बड़े व्रतों का करना आचरण

करना वेद पाठ का सुनना, प्रश्न करना। यह सत्संग की अपेक्षा गौणरूप से वर्णित है।

इस सबका कारण क्या है क्यों योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण कभी अपनी प्राप्ति के सभी साधनों को इसी प्रकार से तिरोधात्मक रूप से कह सकते हैं। सत्संग की अपेक्षा उन्होंने साधना व अभ्यास रखने वाली श्रेणी को बहुत ही गौण रूप से कहकर सत्संग की उत्कृष्टता बतलाई है। वस्तुतः ठीक ढंग से विचार करके देखा जाय तो सत्संग शब्द का अर्थ ही योग है। जिस प्रकार से पतञ्जलि योग दर्शन में यम-नियम आदि अष्टांग योग के साधनों को योग की बहिरंग साधना कह कर उनका दर्जा गौण रख दिया है। इसी प्रकार से परमात्मा की प्राप्ति के योग के अतिरिक्त और भी जितने साधन हैं वे सब ईश्वर की प्राप्ति के साधन भूत हैं और साधन मनुष्य के पुरुषार्थ से ही उपलब्ध हुआ करते हैं। साधन करता हुआ मनुष्य परमात्मा को पा जाता है इसमें कोई शंका की बात नहीं। किन्तु कोई पुण्यात्मा जीव अपनी विविध प्रकार की साधनाओं से महान पुण्य एकत्र करके यदि 'सिद्धयोग' का विद्यार्थी बन जाता है और सत्पुरुषों का संग प्राप्त कर लेता है तब यह साधना उपरोक्त साधनों की अपेक्षा बहुत ही परमोत्कृष्ट है क्योंकि सत्संग शब्द का अर्थ है—

सतां महतो सत्पुरुषाणां संग।

अर्थात् सत्पुरुषों का संग ही सत्संग है। सत्पुरुषों के संग से साधक हर समय शक्ति ग्रहण करता रहता है। वैसे तो संसार का हर प्राणी हर प्राणी से शक्ति प्राप्त करता रहता है। किन्तु शक्ति वे बही सकता है जिसने अपने अन्दर वस्तुतः शक्ति का संचय पूर्णरूपेण कर लिया है। एक व्यक्ति किसी को आंख से देखता है तो वह आँखों के द्वारा अपने दर्शनीय भूत व्यक्ति पर शक्तिपात् करता है। इसके अतिरिक्त यदि योगी वाणी से कोई शब्द कहता है तो वह वाणी के द्वारा शक्तिपात करता है। किसी का स्पर्श करता है तो वह स्पर्श के द्वारा शक्तिपात करता है। हमारे पाठकों ने अच्छी प्रकार से अनुभव किया होगा कि संसार में कोई दुःखी प्राणी अपने दुःखसे आक्रान्त होकर चिल्लाता है, रोता है तो उसको सान्त्वना देने के लिये उसके बड़े-बूढ़े उसके पास जाते हैं जब उसके सिर पर कर-स्पर्श करते हैं उनके प्यार व कर-स्पर्श से वह व्यक्ति शान्ति का अनुभव करता है। यह एक प्रकार का प्राणी शक्ति का ही प्रभाव होता है जिसकी जितनी शक्ति बड़ी होती है उतना ही व मनुष्य दूसरों को शक्ति दे सकता है यह तो लौकिक प्रवाह है लोक में हर व्यक्ति जब इस प्रकार से शक्ति प्राप्त कर लेते हैं तो जो लोग महापुरुषों के संग में रहनेवाले हैं वे लोग कितनी शक्ति को ग्रहण करते रहते हैं इसका कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता क्योंकि महापुरुष पूर्णरूपेण सिद्ध हुआ करते हैं और सभी प्रकार की

शक्तियों से पूर्णरूपेण हर समय सम्पन्न रहा करते हैं इसलिये उनकी हर क्रिया से हर समय शक्तिपात् होता रहता है। जो जन साधारण के कल्याण का बहुत बड़ा साधन बनता है। वस्तुतः तो बिना शक्तिपात् के किसी का पूर्ण रूपेण अभ्युत्थान होना ही असम्भव सी बात है। उपनिषदों में यह स्पष्ट उल्लेख है:—

देहान्ते ज्ञानिभिः पुण्या-
त्पापाच्च फलमाप्यते।
ईदृशं तु भवेन्तत,
भुक्त्वा ज्ञानी पुनर्भवेत् ॥
पश्चात्पुण्येन लभते,
सिद्धेन सह सङ्गतिम्।
ततः सिद्धस्य कृपया,
योगी भवति नान्यथा ॥

अर्थात् शरीर छूट जाने के बाद योग-रहित शाब्दिक ज्ञानियों को भी पाप पुण्य का फल भोगना पड़ता है और इस प्रकार के पाप-पुण्य के संस्कारों को भोग कर इस प्रकार के ज्ञानी लोग पुनः संसार में जन्म लिया करते हैं और उसके बाद पुण्य के प्रभाव से इन लोगों को सिद्ध गुरु की संगति प्राप्त होती है। सिद्ध गुरु की संगति को पाकर के यह लोग योगी बनते हैं तब संसार-चक्र नष्ट होता है। उससे पहिले किसी भी प्रकार से संसार-चक्र नष्ट नहीं होता है। यहां पर इन श्लोकों में बड़े-बड़े ऊंचे ज्ञानी को भी संसार-चक्र से निवृत होने के लिये सिद्ध-संगति की आवश्यकता वांछित हुई। इसलिये जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण जी ने सत्संग की महिमा का इतना बड़ा वर्णन किया है। सत्संग शब्द का अर्थ हम पहले ही लिख चुके हैं:—

सत्पुरुषों व महापुरुषों का संग ही सत्संग कहलाता है। ज्योंही मनुष्य को सत्पुरुषों की संगति मिलती है और सत्संगति प्राप्त करने वाला यदि पुण्यात्मा होता है तो उससे इस प्रकार की चेष्टायें बन जाती हैं जिनसे परिपूर्णतम सर्व समर्थ सिद्ध गुरु का हृदय प्रसन्न हो जाय और प्रसन्नता में उनका जो संकल्प बनता है वही उसके कल्याण का मूल स्रोत बन जाता है। सिद्धों के संकल्प में ही सकल कल्याण निहित है। जो जीव सिद्धों की संगति करते हैं और वह पुण्यात्मा हो तो उनके मनोनुकूल उचित सेवायें व्यवहार स्वाभाविक सम्पन्न होते हैं। क्योंकि वे पुण्यात्मा होते हैं। उनकी उस विनम्रता और सेवाओं को देखकर उनके मन में उसके प्रति ऊंचा शुभ संकल्प बन जाता है जिसके कारण वह व्यक्ति समाहित चित्त हो जाता है। स्वयं तर जाता है और दुनिया को तारने वाला बन जाता है क्योंकि समर्थ पुरुषों की हरेक क्रिया से उसमें बार-बार शक्ति संचरित होती रहती है। उनका बार-बार आह्लाद पूर्वक शक्ति-संचार करना उनके अभ्युत्थान का कारण बन जाता है। इसलिये भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी ने:—

यथावरुन्धे सत्संग,
सर्व संगापहो हि माम्।

यह शब्द सत्संग की महिमा में कहे हैं।

'पहुँचोगे किहि देश' ?

[आचार्य्य यशोवर्द्धन]

इस अनन्त जीवन यात्रा के पथ पे चलने वाले पथिकों से यह पूछना स्वाभाविक ही है कि आखिर तुम्हारे इस प्रकार चलने का लक्ष्य क्या है ? तुमने किस बिन्दु से चलना आरम्भ किया है और किस बिन्दु पर पहुंचना चाहते हो यदि बिना इन प्रश्नों का उत्तर दिये तुम यों ही चले जा रहे हो तो निश्चय ही तुम्हारे इस चलने से कोई लाभ नहीं !

थोड़ा रुको और विचारो कि जो तुम बिना अपनी यात्रा के लक्ष्य बिन्दु का विचार किये बढ़े चले जा रहे हो क्या उसका कोई सुपरिणाम तुम्हें मिल सकेगा। यदि नहीं तो क्या तुम्हारी यात्रा कोल्हू के बैल की सी यात्रा नहीं है। और यदि ऐसा ही है तो पशुत्व बुद्धि का परित्याग करके मनुष्य होने के नाते मानव बुद्धि से मनन करो कि इस यात्रा में तुम कहाँ जाना चाहते हो और किससे मिलना चाहते हो। सन्त कबीर ने तुम्हारे जैसे जीवों की दयनीय दशा पर ही विचार करके कहा है-

साहब की परिचय नहीं।
पहुँचोगे किहि देश ॥

कितनी ऊँची-नीची घाटियाँ और झाड़-झन्खड़ों को पार करके तुम मानव जीवनरूपी इस चौरस समतल से मैदान में आकर खड़े हो सके हो। निश्चय ही थोड़ा प्रयत्न करने से ही तुम यहाँ से सही-सही रास्ते पर चलकर अपनी जीवन यात्रा के चरम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकते हो। तुमने वेद माता से यह वरदान ही बार-बार मांगा है कि:—

अग्ने नय सुपथा राये :—

यानि हमको तू प्रकाशमय पथ पर ले चल। सायं-प्रातः तुम्हारी प्रार्थना में यह ऋचा-पाठ बार-बार दुहराया जाता रहा है लेकिन तुम्हारी वाणी की यह मांग अब तक क्या तुम्हारी क्रिया में उतर सकी है। यदि वाणी और क्रिया का समन्वय हो गया होता तो निश्चय ही तुम इस यात्रा में उस पड़ाव पर आ गये होते जहाँ से तुम्हारा लक्ष्य बिन्दु मोक्ष अथवा परम पुरुषार्थ बिल्कुल तुम्हारी पहुंच की परिधि के भीतर होता।

लेकिन ऐसा नहीं है क्यों नहीं है इस पर ही तुम्हें सोचना है। हमारा कहना यह है कि ऐसा इसलिए है कि तुमने धर्म न धर्म को पहचाना है न धर्म के मर्म को :—

वैशेषिक दर्शन के प्रणेता ऋषि कणाद धर्म की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो वही धर्म है :—

यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धि स धर्मः

तुम्हारे जीवन का प्रत्येक वह कर्म जो तुम्हें अभ्युदय और निःश्रेयस की ओर प्रेरित करे धर्म है। यह धर्म मार्ग ही वेद माता का सुपथ है जिस पर चलने के लिए वह सदैव तुम्हें इङ्गित और प्रेरित करती रहती है। धर्म का यह सुपथ कैसा है इस पर किस

प्रकार से तुम चल सकते हो इसका विशद् विवेचन ही महर्षि पतञ्जलि ने अपने योग-दर्शन में किया है। योग के आठ अङ्ग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि तुम्हें तुम्हारी जीवन-यात्रा के उस चरम लक्ष्य की प्राप्ति करा देते हैं जिसको जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण ने अपना परम धाम कहा है। ऐसा परम धाम जहाँ जाकर फिर इस जीवन-मरण के चक्र में लौटना नहीं पड़ता। वे कहते हैं:—

यद् गत्वा न निवर्तन्ते
तद्धाम परमं मम्।

इसी परम धाम की उपलब्धि ही तुम्हारी जीवन-यात्रा का लक्ष्य बिन्दु है। यहीं तुम्हारा संयोग उस परात्पर सत्ता से होगा जिसे योगियों ने अचिन्त्य, अगम्य, अजन्मा और अनन्त आदि विशेषणों से पुकारा है तथा जिसे तुलसी ने घटघटवासी राम और मीरा ने अपने गिरधर गोपाल के रूप में और कबीर ने अपने साहिब के रूप में वरण किया है। यही वेद का वह प्रकाशमय पथ है जिस पर चलकर फिर मनुष्य को कर्म-बन्धन में नहीं बँधना पड़ता।

यम-नियम, आसन और प्राणायाम का अवलम्बन लेकर पहले अपने को आचारवान बनाओ। भीतर और बाहर से अपनी शुद्धि करो। फिर धारणा और ध्यान के सोपान पर चढ़कर समाधि के द्वारा जीवन के चरम लक्ष्य अथवा जिसे शास्त्रीय भाषा में परम पुरुषार्थ कहा गया है उसकी प्राप्ति करो यही तुम्हारी जीवन-यात्रा का अन्तिम विन्दु है और इसी अन्तिम विन्दु पर तुम सन्त कबीर के उस 'साहिब' का साक्षात्कार कर सकोगे जिसे अनिर्वचनीय आनन्द का सागर कहा गया है और वेदों ने जिसे:—

अपाणि पादो जवनो गृहीता,
पश्यत्यचक्षु स श्रृणोत्यकर्ण ॥
सर्वेत्ति वेद्यं न च तस्मास्ति वेत्ता,
तमाहु रग्रयं पुरुषं महान्तम् ॥

बतलाया है और जिसे गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने मानस-भावों में उतार कर गाया है :—

बिनु पग चलै सुनै बिनु काना।
कर बिनु करम करै विधि नाना ॥
बिनु वाणी वक्ता बड़ योगी।
आनन रहित सकल रसभोगी ॥

हमारा-तुम्हारा और इस चराचर जगत का वही एक मात्र स्वामी है और वही है हमारी-तुम्हारी जीवन-यात्रा का लक्ष्य-विन्दु। इस सत्य और तथ्य को यदि जान लोगे तो निश्चय ही तुम्हारी जीवन-यात्रा सुखद और कल्याणप्रद होगी।

पुनर्जन्म न विद्यते

[श्री विजयसिंह एम. एस-सी०]

संसाररूपी नृत्यशाला में प्रत्येक जीव त्रिगुणात्मिका माया से प्रभावित हुआ नर्तकी की भाँति तरह-तरह से नाच रहा है। यह नृत्य अविश्राम तबतक चलता रहता है जब तक उसके आयुकी अवधि पूरी नहीं हो जाती, नर्तकी जैसे नृत्य करते-करते थक कर विश्राम हेतु रंगशाला को छोड़कर अन्य कक्षोंमें पधारती है उसी प्रकार जीवात्मा तम, रज, सत् के प्रभाव से जीवन पर्यन्त कर्मरत रहता हुआ मृत्युरूपी विश्राम या परिवर्तन को प्राप्त होता है। मृत्यु विनाश का पर्याय नहीं है क्योंकि आत्मा अमर है। इसलिए मृत्यु मात्र परिवर्तन का ही बोधक है। नृत्य करते हुए नर्तकी थक गयी है। इससे यह आशय नहीं निकलता कि भविष्य में फिर वह नहीं नाचेगी अर्थात् वह पुनः नाचेगी। जीव मृत्यु को प्राप्त होकर माया की सत्ता से परे नहीं हो पाता है, अपितु अन्य लोकों के भोगों को भोगकर पुनः इस संसाररूपी रंगशाला में उपस्थित होता है और यह कार्य-क्रम अबाध रूप से तब तक चलता रहता है जब तक जीव माया की सत्ता से मुक्त होने के लिए उत्तम साधनों का आश्रय ग्रहण नहीं करता।

मैं कौन हूं? मैं कहाँ से आया हूं? और मैं कहाँ जाऊँगा? यही तीन प्रश्न सभी मनुष्य कभी न कभी आश्चर्य चकित होकर अपने अन्दर अपने से ही किया करते हैं। एक विचित्र उलझन मस्तिष्क में पैदा होती है कि मैं कैसे मनुष्य हुआ? और मरने पर मैं कहाँ जाऊंगा? अब हमें विचार यह करना है कि क्या मृत्यु और जन्म अनिवार्य है। क्या इस विषम चक्र से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है तो वह कौन से साधन हैं जिसके प्राप्त होने पर मुक्ति प्राप्त होती है। श्रीश्री आदि शंकराचार्य जैसे अद्वैतवादी मनीषी पुरुष भी इस जन्म-मृत्यु चक्र की विषमता पर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहते हैं:—

पुनरपि जन्मं पुनरपि मरणं
पुनरपि जननी जठरे शयनम्।
इह संसारे बहु दुस्तारे
कृपयापारे पाहि मुरारे॥

—चर्पटपञ्जरिका

अर्थात् बार-बार जन्म, बार-बार मृत्यु, बार-बार माँ की कोख में रहना हे भगवन्! यह संसार (त्रैगुणी माया रचित) बड़ा ही दुस्तर है। कृपा करके इससे हमें उबारिये।

भगवद्गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुये जगदात्मा श्रीकृष्ण जी कहते हैं:—

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः
ध्रुवं जन्म मृतस्य च॥

—गीता २।२७

अर्थात्— हे अर्जुन ! जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु भी ध्रुव निश्चित है। भले ही वे मृत्यु को प्राप्त करके अन्य उत्तम लोकों को प्राप्त करलें परन्तु पुण्य क्षीण होने पर पुनः उन्हें इसी संसार में जन्म लेना पड़ेगा।

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं।
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति॥
—गीता ९। २१

हमारी पौराणिक कथाओं में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं, जिनमें मनुष्य योनि यथा इन्द्र पद प्राप्त महाराजा नहुष को सर्प योनि में पुण्य क्षीण होने से जन्म लेना पड़ा था। मनुस्मृति में कर्मों के आधार पर तीन प्रकार की योनियों की प्राप्ति का वर्णन मिलता है :—

देवत्वं सात्विका यान्ति
मनुष्यत्वं च राजसाः।
तिर्यक्त्वं तामसा नित्य-
मित्येषा त्रिविधा गतिः॥
—मनुस्मृति १२। ४०

अर्थात् सत्वगुणी लोग देवयोनि को, रजोगुणी मनुष्य योनि को और तमोगुणी तिर्यक् योनि को प्राप्त होता है। जीवों की सदा यही तीन गति होती हैं।

उपर्युक्त श्लोक से स्पष्ट ज्ञात होता है कि सत्व प्रधान व्यक्ति भी माया के बन्धन से मुक्त नहीं हो पाता है और उसको भी पुनः जन्म ग्रहण करने ही पड़ते हैं। यथार्थ रूप से मोक्ष का अधिकारी वही जीव होता है जो इन तीनों गुणों से अपने को विरहित कर पूर्ण एकाग्रावस्था को प्राप्त हो जाता है। अर्थात् जिसका मन हर प्रकार के मायिक विकारों से मुक्त हुआ समाधिलीन हो चुका है। इस प्रकार जीव को मोक्ष अर्थात् जन्म-मरण से मुक्त होने के लिए योग का आश्रय ग्रहण करना चाहिए। योग का सरल अर्थ है—'जीवात्मा एवं परमात्मा का मिलन।' और यह योग बिना गुरु कृपा के सुलभ नहीं है। सन्तों की कृपा भी जीव को तभी प्राप्त होती है जब वह अपने निष्काम भाव से किए गये सत्कर्मों के प्रभाव स्वरूप पुण्य-पुञ्ज का भागी होता है। अर्थात् पुण्य के प्रबलता से ही सिद्धों का अनुग्रह प्राप्त होता है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामचरित मानस में कहा है कि :—

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न सन्ता।
सत संगति संसृति कर अंता॥

अर्थात् पुण्य के प्रबल प्रभाव से सन्त का समागम जीव को प्राप्त होता है और उनकी संगति से ही आवागमन का अन्त होता है। परन्तु देखने में ऐसा आता है कि सारा मानव जगत् मान, मद, मोह, लोभ, ईर्ष्या, काम, क्रोध, कपट के विषम जाल में उलझता रहता है तथा इन्हीं कारणों से निष्काम कर्म भी नहीं कर पाता है। इसके अतिरिक्त जड़-बुद्धि प्रधान व्यक्ति, जिनको ईशतत्व में विश्वास ही नहीं है, वे जन्म-मरण को न मानकर भोगवाद का ही प्रचार किया करते हैं और चार्वाक सूत्र को बारम्बार दोहराया करते हैं कि :—

यावज्जीवं सुखं जीवेत्

ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत ।
भस्मीभूतस्य देहस्य
पुनरागमनं कुतः ॥
—चार्वाक

अर्थात् अहो ! यह देह तो एक दिन नष्ट हो ही जावेगा और नष्ट होकर उसे पुनः उत्पन्न होना नहीं है । अतः जब तक जीवें क्यों न सुखपूर्वक जीवन यापन करें, भले ही इसके लिए ऋण लेकर घी क्यों न पीना पड़े । ऐसे लोग धन को ही सबसे बड़ा सुख का साधन समझते हैं और जिसको अर्थ की आकांक्षा अधिक रहा करती है वही लोभी हुआ करता है । नचिकेता को उपदेश देते स्पष्ट शब्दों में यमराज चेतावनी देते हुए कहते हैं :—

न साम्परायः प्रतिभाति बालं
प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढम् ।
अयं लोको नास्ति पर इति मानी ।
पुनः पुनर्वशमापद्यते मे ॥

अर्थात :— जो मूर्ख धन के मोह से अंधे होकर प्रमाद में लगे रहते हैं, उन्हें परलोक का साधन नहीं सूझता । यही लोक है परलोक नहीं है ऐसा मानने वाला मनुष्य बार-बार मेरे चंगुल में फसता है अर्थात् बार-बार जन्म-मरण को प्राप्त होता रहता है ।

योग दर्शन के अन्तर्गत भी कई सूत्रों द्वारा पूर्व जन्म का होना सिद्ध होता है । भगवान पतंजलि महाराज ने बताया है कि :—

संस्कार साक्षात् करणात् पूर्वजातिज्ञानम् ।

अर्थात् :— पूर्व जन्म का ज्ञान सम्पूर्ण संस्कारों के साक्षात्कार हो जाने पर हो जाया करता है । दोनों प्रकार के कर्मों से उत्पन्न हुआ कर्माशय जिसकी जड़ क्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और मृत्युभय) है, वर्तमान जन्म या आगे के जन्मों में भोगा जा सकता है ऐसा निम्नलिखित सूत्र में योगाचार्य पतंजलिदेव जी ने वर्णन किया है :—

क्लेशमूलः कर्माशयो
दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः ।
—साधन पाद १२

आगे वे किस प्रकार से भोगे जावेंगे इसका भी रूप बताते हुए महर्षि पातञ्जलि जी कहते हैं :—

सतिमूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ।
—साधन पाद १३

अर्थात् :— उन वासनाओं का फल जाति (योनि) आयु (जीवन काल) और भोग (सुख दुःख) के रूप में हुआ करता है ।

भगवद्गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुए जब भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी ने कहा कि हे अर्जुन ! सर्वप्रथम मैंने योग का उपदेश आदिकाल में सूर्य को दिया था । वहीं तुरन्त अर्जुन प्रश्न करते हैं कि भगवन् आप तो अब हुए हैं और सूर्य बहुत पुरातन हैं । कैसे आप सूर्य को योग का उपदेश दिए थे ? इस पर भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी कहते हैं कि :—

बहूनि मे व्यतीतानि
जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि
न त्वं वेत्थ परंतप ॥

अर्थात् हमारे और तुम्हारे बहुत से जन्म व्यतीत हो चुके हैं उन सभी को मैं जानता हूं, तुम नहीं जानते। इस प्रकार पुनर्जन्म का होना सिद्ध ही है।

पुनर्जन्म का निरोध :—

श्री मद्भागवत् में महाराजा परीक्षित् ने भगवान् शुकदेव जी से पूछा कि हे गुरुदेव :—

अतः पृच्छामि संसिद्धिं
योगिनां परमं गुरुम्।
पुरुषस्येह यत्कार्यं
म्रियमाणस्य सर्वथा॥

– श्री मद्भागवत (१।१९।३७)

अर्थात् :— 'आप योगियों के परम गुरु हैं इसलिये मैं आपसे परम सिद्धि के स्वरूप और साधन के सम्बन्ध में प्रश्न कर रहा हूं। जो पुरुष सर्वथा मरणासन्न है, उसे क्या करना चाहिये ? ऐसे उत्तम प्रश्न के उत्तर में भगवान श्री शुकदेव जी महाराज ने बताया कि :—

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां
स्वधर्मपरिनिष्ठया।
जन्म लाभः परः पुंसा-
मन्ते नारायणस्मृतिः॥

मनुष्य जन्म का यही इतना लाभ है कि चाहे जैसे हो सांख्ययोग से, ज्ञानयोग से, भक्ति-योग से अथवा अपने धर्म की निष्ठा से जीवन को ऐसा बना ले कि जिससे मृत्यु के समय भगवान की स्मृति बनी रहे। इसी बात की पुष्टि बहुत पहले भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी स्वयं अपने मुखारविन्द से भगवद्गीता में कह रहे हैं कि :—

अन्तकाले च मामेव
स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं
याति नास्त्यत्र संशयः॥

अर्थात् :— जो पुरुष अन्तकाल में मेरे को ही स्मरण करता हुआ इहलोक वासी होता है वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

परन्तु अपवाद स्वरूप कुछ उदाहरणों को छोड़कर देखने में यही आता है कि जो व्यक्ति जिस प्रकार के कर्मों में रत रहता है उसे मृत्यु के समय भी उसी प्रकार के कर्मों की चिन्ता बनी रहती है। इतना ही नहीं वरन उस समय और भी घनीभूत होकर उन कर्मों का चिन्तन हुआ करता है। डाका, नृशंस हत्या करने वाले लुटेरों का अन्त भी बहुत भयानक तौर से होते देखा गया है। अतः प्रारम्भिक जीवन से ही मनुष्य को योग के किसी भी अंग का पालन पूर्णतया करने का प्रयास करते रहना चाहिये। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि इन आठों अंगों में से किसी भी अंग का यदि कोई दृढ़तापूर्वक अपने जीवन में पालन करने लग जावे तो वह अवश्य ही मोक्ष का अधिकारी बन जावेगा।

सत्य को धारण करने वाले व्यक्ति जो इन्द्रियजित् होकर अपनी वाणी पर संयम कर लेते हैं वे अवश्य ही इस दुस्तर संसार से

अत्यन्त सरलता पूर्वक निस्तरित हो जाया करते हैं। जिन साधकों ने अपने जीवन में ब्रह्मचर्य का ही विधिवत् पालन कर लिया उन्होंने सहज ही मुक्ति को प्राप्त कर लिया है क्योंकि मन प्राण और वीर्य का एक दूसरे से सम्बन्ध है। एक का निरोध होने पर दो का निरोध स्वयं हो जाता है। इस प्रकार ब्रह्मचर्य जीवन-यापन करने वाले स्वतः समाधि के अधिकारी हो जाया करते हैं। प्राणायाम के द्वारा यदि कोई प्राणों का जय करले तो वह धीरे-धीरे मन और वीर्य पर नियन्त्रण प्राप्त कर लेता है। श्रुति अनुसार।

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति।

—कठोपनिषद्

इसी प्रकार स्वाध्याय, तप इत्यादि किसी एक की साधना पूर्ण कर लेने पर साधक मोक्ष का अधिकारी हो जाया करता है। अर्थात् उसे पुनः जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं फंसना पड़ता है। मंत्र जप की महत्ता के बारे में स्वयं भगवान् जगत पिता शंकर जी माता पार्वती को बताते हुए कहते है कि:—

जपात् सिद्धिर्जपात्
सिद्धिर्जपात् सिद्धिर्वरानने।

हे पार्वतीजी! केवल मन्त्र के जप से ही मनुष्य सकल सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है।

जिनको अष्टांग योग की आन्तरिक साधना सिद्ध हो चुकी है, वे पूर्णरूपेण मुक्त है। ये आन्तरिक साधना में धारणा, ध्यान और समाधि है। धारणा की पूर्ण अवस्था ही ध्यान है और ध्यान की पूर्णता समाधि है तथा समाधि की पूर्णता मोक्ष है। समाहित चित्त में अहं तत्त्व नहीं रहता है। अहं तत्व चित्त में होने के कारण ही असत जगत् का निर्माण हुआ करता है। यह मैं कौन हूं, यह शरीर मेरा है, ऐसा भाव असमाहित चित्त में ही रहा करता है, जिसके कारण जीव बार-बार जन्म ग्रहण करता है। समाधि अवस्था में इन्द्रियों की और अन्तःकरण की सभी वृत्तियां लुप्त हो जाती है। ध्याता, ध्येय और अनुभव का अभाव होता है। उस समय साधक का मन पूर्ण शून्यमें विहार करता हुआ मुक्त ही रहता है।

इस कलिकाल में जिस जीव को सिद्धों की संगति प्राप्त हो गई है, उनको तो मात्र मोक्ष प्राप्त करने के लिए अर्थात् जीवन-मरण चक्र से छुटकारा प्राप्त करने के लिए सब साधनों को त्याग कर भगवान् श्रीकृष्ण-चन्द्र के कहे हुए वचनों का ही पालन करना चाहिए:—

अनन्यचेताः सततं
यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ
नित्ययुक्तस्य योगिनः॥

अर्थात् भगवान कहते हैं कि जो पुरुष मुझमें अनन्य चित्त से स्थित हुआ सदा ही निरन्तर मुझे स्मरण करता है, उस निरन्तर मेरे में युक्त हुए योगी के लिए मैं सुलभ हूं। अर्थात् सहज ही प्राप्त हूं। अब प्रश्न उठता है योग के द्वारा निर्मल चित्त प्राप्त करके

भगवान का अनन्य चिन्तन करने से भगवत्-साक्षात्कार होने पर क्या होगा? इसी उत्तर में भगवान स्वयं आगे कहते हैं :—

मामुपेत्य पुनर्जन्म
दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः
संसिद्धिं परमां गताः॥

अर्थात् वे परम सिद्धि को प्राप्त हुए महात्माजन मेरे को प्राप्त होकर, दुःख के स्थानरूप क्षणभंगुर पुनर्जन्म को नहीं प्राप्त होते हैं। क्योंकि ब्रह्मलोक से लेकर सब लोक पुनरावर्ती स्वभाव वाले होते हैं। अर्थात् जिस लोक को प्राप्त करके पुनः संसार में आना पड़े। मेरे को प्राप्त होकर जीव का पुनर्जन्म नहीं होता है, क्योंकि मैं कालातीत हूं और सभी लोक काल के अन्तर्गत हैं।

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः
पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय
पुनर्जन्म न विद्यते॥

दशरथ एवं दशमुख

इसके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करने जैसा है। हमारे यहाँ दशरथ-दश इन्द्रियों का संयम करनेवाला-राजा है और उसका पुत्र 'राम' सबको आनन्द देनेवाले रूप में प्रसिद्ध है। यह देव है। संयम का फल देवत्व है। दूसरा भोगी दशमुख रावण है। वह इन्द्रियों से भोग भोगनेवाला तो है, किन्तु रावण अर्थात् 'रोनेवाला' है। उसके पल्ले रोने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इसकी लङ्का जलकर खाक हो जाती है और अन्त में इसका भी सम्पूर्ण विनाश हो जाता है। वह असुर या राक्षस है, क्योंकि असंयम का यही निश्चित परिणाम होता है। संयम से ऋषि या देव बना जा सकता है। भोग से यदि प्रथम सुख मालूम हो तब भी अन्त में रोना पड़ता है और सर्वस्व नाश का दुःख भोगना पड़ता है।

—स्व० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

भूत-जय का साधन

[श्री पं० हीरालाल शास्त्री, फर्रुखाबाद]

पञ्च भूतः—

शब्द गुणवाला आकाश-शब्द स्पर्श गुण वाला वायु, शब्द स्पर्श रूप गुण वाला तेज, शब्द स्पर्श रूप रस गुणवाला जल, शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध गुणयुक्त पृथ्वी कही गई है। इस तरह आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी पञ्च महाभूत उत्तरोत्तर एक से अधिक गुण वाले हैं।

इनके जय का उपाय :—

स्थूल, स्वरूप, सूक्ष्म, अन्वय, अर्थवत्त्व, इन पाँच अवस्थाओं में संयम करने से भूत जय होता है अतः इन्हीं को भूत जय का साधन कहा है।

योगदर्शन में पतञ्जलि :—

स्थूल स्वरूप सूक्ष्मान्वयार्थवत्त्व संयमात् भूत जय।

— ३-४४

१. स्थूलावस्था :—

भूतों को जिस रूप में हम अपनी इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं वे इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष में आने वाले शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध नामक पाँच विषय ही भूतों की स्थूलावस्था है।

२. स्वरूपावस्था :—

उनके लक्षणों को ही स्वरूपावस्था कहते हैं जैसे आकाश का अवकाश वायु की गति कम्पन, अग्नि की उष्णता और प्रकाश जल का गीलापन, पृथ्वी का मूर्ति स्वरूप (कड़ापन) यह भूतों की स्वरूपावस्था है इन लक्षणों द्वारा ही पाँचों भूतों की भिन्न-भिन्न सत्ता का ज्ञान होता है।

३. सूक्ष्मावस्था :—

भूतों की जो कारण अवस्था है जिनको तन्मात्रा और सूक्ष्म महाभूत भी कहते हैं यही भूतों की सूक्ष्मावस्था है जैसे कि पृथ्वी की गन्ध तन्मात्रा, जल की रसतन्मात्रा, तेज की रूप तन्मात्रा, वायु की स्पर्श तन्मात्रा और आकाश की शब्द तन्मात्रा (यह सूक्ष्मावस्था है)।

४. अन्वयावस्था :—

पाँचों भूतों में जो तीनों गुणों (सत्त्व, रज, तम) का स्वभाव अर्थात् प्रकाश क्रिया स्थिति व्याप्त है (अन्वयावस्था है)।

५. अर्थ तत्त्वावस्था :—

यह पाँचों भूत पुरुष के भोग और मोक्ष के लिये हैं अर्थात् इनके बिना शरीर धारण नहीं हो सकता और शरीर के बिना पुरुष को भोग-मोक्ष मिल ही कैसे सकता है फिर संसार ही नहीं रह सकता है यही इनकी विशेष प्रयोजनता है।

इस प्रकार पाँचों भूतों की प्रत्येक अवस्था के क्रम से सम्पूर्ण अवस्थाओं में भली भांति संयम करके जब योगी इनको प्रत्यक्ष कर लेता है तब योगी का इन भूतों पर पूर्ण अधिकार हो जाता है इसी को भूत जय कहते हैं।

मणिप्रभा टीका :—

इस प्रकार भूतों के पाँच रूपों में जो कि कार्य स्वरूप हेतु हैं उनमें स्थूलादि क्रम से संयम करने पर पाँचों भूत योगी के संकल्पानुसार हो जाते हैं जैसे बछड़े के ही अनुसार गायें हो जाती हैं।

यथा :—

एवं भूतानां पञ्चरूपेषु कार्य स्वरूप हेतुषु स्थूलादि क्रमेण संयमात् भूतानि। योगि संकल्पानुसारीणि भवन्ति वत्सानुसारिण्य इव गाव इत्यर्थ॥

भूत जय से :—

ततोः णिमादि प्रादुर्भावःकाय सम्पत्तद्धर्मानभिघातश्च।

—पा.यो.द.,

भूतों पर विजय प्राप्त करने के लिये धारणा, ध्यान, समाधि यह तीनों साधन नियम पूर्वक दृढ़ता से करना अत्यावश्यक है इसी लिये इन तीनों का सांकेतिक नाम संयम बतलाया है।

योगदर्शन :— त्रयमेकत्र संयमः।

तीनों साधन एकत्र मिलकर संयम कहे जाते हैं।

धारणा :— देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।

शरीर के भीतर किसी एक स्थान पर चित्त को स्थिर करने का नाम धारणा है इसी प्रकार शरीर के बाहर भी चित्त स्थिर किया जा सकता है यह भी धारणा कही जाती है।

शरीर के भीतर हृदय-कमल, नाभिचक्र आदि प्रदेश हैं और आकाश, सूर्य, चन्द्रमा या कोई देवता या मूर्ति या अन्य कोई भी पदार्थ बाहर के प्रदेश हैं इनमें चित्तवृत्ति को स्थिर करने का नाम धारणा है।

ध्यानम् :— तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

जहाँ चित्त को लगाया जाय उसी में वृत्ति का एक तार चलना ध्यान है।

अर्थात् जिस ध्येय वस्तुमें चित्त को लगाया जाय उसीमें चित्त एकाग्र हो जाय केवल ध्येय मात्र की एक ही तरह की वृत्ति का प्रवाह निरन्तर चले। बीच में किसी भी दूसरी वृत्ति का ध्यान न होने पावे।

समाधि :—

तदेवार्थ मात्र निर्भासं स्वरूप, शून्य मिव समाधिः।

—पा. यो.द,

ध्यान करते-करते जब चित्त ध्येयाकार में परिणत हो जाता है उसका अपने स्वरूप का अभाव-सा हो जाता है—अर्थात् उस समय ध्येय से भिन्न उपलब्धि नहीं होती तब उस ध्यान को ही समाधि कहते हैं इसी दशा को निर्वितर्क समाधि के नाम से समाधि पाद में कहा गया है।

पा. यो. द. :--

स्मृति परि शुद्धौ स्वरूप शून्येवार्थ मात्र निर्भासा निर्वितर्का।

—पा.यो.द. १ । ४३

इसमें शब्द और प्रतीति का कोई विकल्प नहीं रहता अतएव इसको निर्वितर्क नाम से प्रयुक्त किया गया है।

यो. द. :-- तज्जयात् प्रज्ञालोक

अर्थात् भूत जय सिद्ध होने पर बुद्धि का प्रकाश हो जाता है।

संयम प्रयोग विधि :--

तस्य भूमिषु विनियोगः

संयम का प्रयोग क्रम से करने पर ही सफलता मिल सकती है।

अर्थात पहिले स्थूल विषय में संयम किया जाय उसके स्थिर होने पर ही सूक्ष्म विषय में क्रमशः संयम किया जाय, इस प्रकार जिस-जिस विषय में संयम स्थिर होता जाय तब उस उससे आगे बढ़ते रहना चाहिये। तब ततोऽणिमादि प्रादुर्भाव आदि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, वशित्व, ईशित्व यह आठ सिद्धि योगी को प्राप्त हो जाती हैं।

अणिमा :--

अणु के समान सूक्ष्मरूप धारण कर लेना जैसे श्री हनुमानजी ने लंकाकी सीताकी खोज में जाते समय सुरसाके आग्रह पर किया था।

महिमा :--

शरीर को इच्छानुसार बड़ा कर लेना उसी समय सुरसा के मुख फैलाने पर श्री हनुमान जी ने किया था।

लघिमा :--

शरीर को हल्का कर लेना। जैसे लङ्का प्रवेश में श्री हनुमान् जी ने मच्छर के समान शरीर धारण कर लिया था।

गरिमा :--

शरीर को भारी कर लेना जैसे महाभारत में भीमसेन के मार्ग में रुकावट डालते समय श्री हनुमान जी ने किया था।

प्राप्ति :--

किसी भी अभीष्ट पदार्थ को संकल्प मात्र से ही प्राप्त कर लेना। अंगुल्या चन्द्रस्पर्शनं प्राप्तिः (मणिप्रभा)

प्राकाम्य :--

किसी भी भौतिक पदार्थ सम्बन्धी इच्छा की पूर्ति बिना रुकावट अनायास हो जाना। सत्य संकल्पत्वं प्राकाम्यम् (मणिप्रभा)

जैसे श्री हनुमान् जी ने सूर्योदय के समय सूर्य को मुख में रख लिया था।

वशित्वम् :--

पञ्च महा भूत और तज्जन्य पदार्थों का वश में हो जाना 'भूत नियन्तृत्वं वशित्वम्' (मणिप्रभा)

ईशित्वम् :--

पञ्च भूतों और भौतिक पदार्थों को नाना यों से उत्पन्न करके उन पर शासन करने की सामर्थ्य होना। (भूत स्रष्टृत्व मीशित्वम्) मणिप्रभा काव सम्पत्।

रूप लावण्य बल वज्र संहननत्वानि कायसम्पत्।

—पा. यो. द. ३ । ४६

अत्यन्त सुन्दर रूप वाली आकृति सम्पूर्ण अङ्गावयवों में चमक तथा अपूर्व बल और

वज्र के समान सभी अङ्गों का दृढ़ और परिपूर्ण होना—तद्धर्मा नभिघातश्च ।

अर्थात् भूतों के धर्मों से योगी के शरीर में किसी प्रकार की बाधा न होना जैसे पृथ्वी के अन्दर भी योगी का प्रवेश उसी प्रकार हो सकता है जैसे कि साधारण मनुष्य जल में घुसता है पृथ्वी का धर्म स्थूल भाव (कठिनता) उसे बाधा नहीं पहुंचा सकता है उसके शरीर पर यदि पत्थरों की वर्षा भी की जाय तो उसके शरीर में आघात नहीं हो सकता ।

जल :—

जल भी इसी प्रकार अपने गीलेपन से उसे गला नहीं सकता । जल में भी पृथ्वी की भाँति प्रवेश कर सकता है ।

अग्नि :—

अग्नि उसे जला या किसी प्रकार की बाधा नहीं कर सकता है ।

वायु :—

वायु उसे उड़ा नहीं सकता ।

अर्थात् सर्दी गर्मी, वर्षा आदि कोई भी भूतों के धर्म उसके शरीर में किसी भी अपने-अपने धर्मानुसार बाधा नहीं पहुंचा सकते ।

इस प्रकार संक्षेप में भूतों का जय और उसका साधन बतलाया गया । समयानुसार फिर कभी इन विषयों पर प्रकाश डाला जा सकेगा ।

जीवन की कामना

पश्येम शरदः शतम् । जीवेम शरदः शतम् ।
बुध्येम शरदः शतम् । रोहेम शरदः शतम् ।
पूषेम शरदः शतम् । भवेम शरदः शतम् ।
भूयेम शरदः शतम् । भूयसी शरदः शतात् ।

—अथर्व० १९ । ६७ । २-८

सौ वर्ष से भी अधिक जीने, देखने, सुनने, ज्ञानार्जन करने, बढ़ने, पुष्ट होने, और आनन्दमय जीवन की कितनी कमनीय कामना है । इसी सांस्कृतिक अभ्युदय काल में आर्य-जाति उत्साहमय स्वस्थ वातावरण में यशस्वी जीवन की विजय यात्रा में अग्रसर हो रही थी । यह आशामयी भावना वैदिक संस्कृति की ही देन है जो विश्व में अपने ढङ्ग की निराली है ।

स्त्रियाँ और योग

[सुश्री उमा शर्मा बी. ए. संगीत, शामली]

हमारे भारत वर्ष में इस पुण्य पृथ्वी पर अनेक महान् पुरुषों, तपस्वियों, तथा ऋषियों ने जन्म लिया। हमारी यह पावन पृथ्वी सदा-सर्वदा से पवित्र रही है और पवित्र रहेगी। इसको अनेक योगियों और योगिनियों ने स्त्री की भाँति—जैसे स्वर्ण के आभूषण स्त्री को शोभित करते हैं, उसी प्रकार इसको आलोकित किया है। जिस प्रकार कर्ण की शोभा शास्त्र सुनने से होती है कुण्डल पहनने से नहीं, हाथों की शोभा दान करने से होती है कंगन पहनने से नहीं। जैसे शिव की शोभा शक्ति से होता है! उसी प्रकार हमारे भारत वर्ष की शोभा 'योगी', तपस्वी एवं मंत्र द्रष्टा लोगों से है।

जिस प्रकार त्रेता में भगवान श्री रामचन्द्र जी ने अयोध्या में जन्म लेकर पृथ्वी के भार को उतारा, द्वापर युग में अखिल लोकपावन योग योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण ने योग को चमत्कृत किया। जगदात्मा भगवान श्रीकृष्ण गीता में बार-बार अर्जुन को योग का ही उपदेश करते हैं। पावन गीता के दूसरे अध्याय के ४८ वे श्लोक में कहते हैं :—

भगवानुवाच :—

योगस्थः कुरु कर्माणि,
संगं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा
समत्वं योग उच्यते॥

अखिल लोक पावन योगयोगेश्वर श्री कृष्णचन्द्र अर्जुन को उपदेश करते हैं :—

अर्थात् हे धनंजय! आसक्ति को त्यागकर (तथा) सिद्धि और असिद्धि में समान बुद्धि वाला होकर योग में स्थित हुआ कर्मों को कर (यह) समत्व भाव ही योग (नाम से कहा) जाता है।

दूरेण ह्यवरं कर्म,
बुद्धि योगाद्धनंजय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ,
कृपणाः फलहेतवः॥

बुद्धियोग से सकाम कर्म अत्यन्त तुच्छ है। इसलिये हे धनञ्जय! समत्व बुद्धि योग का आश्रय ग्रहण कर क्योंकि फल की वासना वाले अत्यन्त दीन हैं।

बुद्धि युक्तो जहातीह,
उभे सुकृत दुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व,
योगः कर्मसु कौशलम्॥

अर्थात् हे अर्जुन! समत्व बुद्धि युक्त पुरुष पुण्य पाप दोनों को इस लोक में ही त्याग देता है। अर्थात् उनसे लिपायमान नहीं होता इससे समत्व बुद्धि योग के लिये ही चेष्टा कर यह समत्व बुद्धि रूप योग ही कर्मों

में चतुरता है अर्थात् कर्म बंधन से छूटने का उपाय है।

अतः जिस प्रकार भगवान श्रीकृष्णचन्द्र गीता में जिज्ञासु अर्जुन को बार-बार योग का ही उपदेश करते हैं उस योग के आश्रित होकर या उस पर चलकर ही जीव अपने परम कल्याण को प्राप्त कर सकता है। योगी सम्पूर्ण संसार में सूर्य की भांति चमकते हैं। उन्हीं के द्वारा ही यह लोक प्रकाशित होता है। अन्यथा कभी न हुआ और न कभी हो सकता है।

जिस प्रकार योगियों ने इस पृथ्वी को शोभित किया है उसी प्रकार नारी जाति योगिनियों ने भी हमारे लिये अपने आदर्श छोड़ दिये हैं। माता अनुसुइया, माता सीता माता पार्वती, माता सुलोचना इत्यादि अन्य भी हुई है, जिनमें चूड़ाला भी एक योगिनी हुई हैं। योगवशिष्ठ के अन्तर्गत चुड़ाला का उपाख्यान सर्व श्रेष्ठ है। इसके द्वारा वशिष्ठ जी ने श्री रामचन्द्र जी को यह बतलाया है कि आत्म-ज्ञान प्राप्त करने और योगाभ्यास करके सब प्रकार की सिद्धियां प्राप्त करने में स्त्रियों का भी उतना ही अधिकार है जितना कि पुरुषों का। आध्यात्मिक सिद्धि केवल पुरुषों का ही ध्येय नहीं है बल्कि प्राणिमात्र का। यदि स्त्री की आत्म-ज्ञान में स्थिति हो जावे तो वह पुरुषों को उसी प्रकार आत्म-ज्ञान प्राप्त करा सकती है जैसे कि एक पुरुष दूसरे को। चुड़ाला की प्रस्तुत कथा इस प्रकार है।

पहले द्वापर युग में मालव देश में शिखिध्वज नाम का एक बहुत सुन्दर और प्रतापी राजा राज्य करता था। उसका विवाह सुराष्ट्र देश की एक राजकन्या से जो बहुत सुन्दर और विदुषी तथा योगिनी थी हुआ था। रानी का नाम चुड़ाला था। राजा और रानी में अत्यन्त स्नेह था तथा दोनों को ही सम्पूर्ण सुख था। सब प्रकार के सुखों से तृप्त होते हुए उनके मन में यह विवेक उत्पन्न हुआ कि हम सब प्रकार के भोगों और सुखों का आस्वादन कर चुके और शरीर शक्ति भी क्षीण होती जा रही है किन्तु हृदय में तृप्ति और शान्ति नहीं है। क्या मनुष्य का जीवन यही है कि सम्पूर्ण सुखों को प्राप्त करते हुए भी वह आत्मशान्ति से रहित रहे? यह सब सोचते हुए संसार के सब विषय और भोगों से विरक्ति हो गई और उन्होंने अपने राज्य के बड़े-बड़े विद्वानों को बुलाया और इस प्रश्न को पूछा-विद्वानोंने कहा महाराज! आत्म ज्ञान हो जाने पर मनुष्य को परम शान्ति प्राप्त होती है। वही प्राप्त करना मनुष्य का लक्ष्य है।

तदुपरान्त राजा और रानी दोनों ने आत्मज्ञान प्राप्त करने का निश्चय किया। रानी-राजा से अधिक विदुषी थी—उसका विचार सूक्ष्म और निश्चयात्मक था। थोड़े ही समय में उसे योगाभ्यास से आत्म-ज्ञान प्राप्त हो गया। उसके मुख पर स्वतः ही अलौकिक सौंदर्य छा गया। लेकिन राजा को आत्मज्ञान नहीं प्राप्त हुआ। वह रानी को प्रसन्न ही प्रसन्न देखता था। जब राजा रानी की प्रसन्नता को नहीं पहचान सका तब रानी

ने राजा को बतलाया कि उसका हृदय आनंद से पूर्ण हो गया है और सारा जगत उसे आनंदमय ही दिखाई देता है लेकिन राजा की समझ में यह बात नहीं आई। क्योंकि उसने अनुभव ही नहीं किया था। रानी ने बहुत यत्न किया लेकिन राजा ने उसकी बातों की परवाह नहीं की। वह चूड़ाला को छोटी समझ कर उससे उपदेश लेने में अप-मान समझता था।

रानी ने योग मार्ग द्वारा अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कीं और राजाको उनका प्रदर्शन कराया तो भी राजा ने नहीं माना। उसके मन में यही मिथ्याभिमान बना था कि पुरुष स्त्री से अधिक समर्थ और चतुर होता है, उसको स्त्री क्या सिखा सकती है? जब अनेक यत्न करने पर भी राजा को आत्म-ज्ञान नहीं हुआ तब उसने विचार किया कि मैं राजपाट को छोड़कर वन में जाकर ही आत्म-ज्ञान प्राप्त कर सकूँगा। रानी ने बहुत समझाया लेकिन वह नहीं माना।

अतः वह एक रात्रि को जब रानी चूड़ाला प्रगाढ़ निद्रा में सोयी हुई थी राजा तीर्थ यात्रा के बहाने चल दिया और एक वन में जाकर तपस्या करने लगा। वहाँ नाना प्रकार के साधन और तीर्थयात्रा करने पर भी उसे आत्म-ज्ञान नहीं हुआ।

इधर जब रानी की आँखें खुलीं और राजा को पलंग पर न देखा तब उसने सोचा कि अब राजा वन को ही चले गये हैं। तब उसने शान्त भाव से विचारा कि अब क्या करना चाहिए? राज्य में राजा की खबर सुनकर खलबली हो अराजकता फैल जायेगी। तब राज्य में हानि और सबको दुःख होगा। इसलिए उसने स्वयं राज-काज चलाने का विचार किया और किसी को भी यह खबर नहीं दी कि राजा वन को चले गये हैं।

प्रातःकाल ही रानी ने मन्त्रियों और कर्मचारियों के सामने घोषणा की कि राजा कुछ समय के लिए दूसरे देशों की यात्रा करने गये हैं। चूड़ाला ने राज-काज ठीक प्रकार चलाया और उसने एक दिन सोचा कि यह पता लगाना चाहिए कि राजा अब कहाँ है? योग की सब सिद्धियाँ तो उसे प्राप्त हो ही चुकी थीं। वह ध्यानस्थ रहती थी। समाधि में बैठकर उसने राजा के निवास स्थान का पता लगाया। वह आकाश मार्ग से सूक्ष्म शरीर द्वारा उड़कर ठीक उसी स्थान पर जहाँ पहुँच गई जहाँ राजा था। अब भी राजा उसी दशा में है। न उसका चित्त शांत है और न उसको आत्म-ज्ञान ही हुआ। रानी को उस पर करुणा आई और उसने सोचा राजा को किसी प्रकार आत्मज्ञान प्राप्त कराना चाहिए।

रानी ने एक ऋषिकुमार का वेष धारण किया और उसके सामने प्रगट हुई। राजा एक बहुत सुन्दर ऋषिकुमार को आते देख बहुत प्रसन्न हुआ। अतिथि का सत्कार करके पूछा। महाराज! आप कौन हैं और कहाँ से आ रहे हैं? ऋषि ने उत्तर दिया महाराज! मैं देवऋषि नारद का पुत्र कुम्भज

हूं और देवलोक में रहता हूं। पृथ्वीतल पर भ्रमणार्थ आया हूं। आपको इस विजन वन में देखकर मुझे आपसे मिलने की उत्कंठा हो आई। इस प्रकार दोनों में प्रश्न और उत्तर हुए। तब उन दोनों में घनिष्ट मित्रता हो गई और राजा को कुम्भज के प्रति बहुत श्रद्धा और प्रेम हो गया। कुम्भज प्रतिदिन राजा के पास आकर वार्तालाप कर जाता था। इस प्रकार रानी राजकाज भी करती और कुम्भज वेष में राजा को उपदेश भी करती।

कुम्भज के वेष में ही चूड़ाला ने राजा को आत्म-संबन्धी अनेक प्रकार की बातें सुनाईं और साधन की विधियें बतलाईं। राजा को धीरे-धीरे आत्म-ज्ञान होने लगा तथा समाधि लगने लगी। आत्म ज्ञान में परिपक्व हो जाने पर स्थिति आत्म-भाव में हो गई और वह जीवन मुक्त हो गया। अब वह हर्ष और सुख का अनुभव करने लगा और आत्म-शान्ति भी प्राप्त करने लगा। वह सदा आत्मानंद में लीन रहने लगा।

रानी (कुम्भज) ने अब उसकी परीक्षा लेनी चाही और कई प्रकार के प्रश्न किये जो अत्यंत वासनायुक्त थे। लेकिन राजा के मन में कोई भी विकार पैदा नहीं हुआ और राजा ने प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया कि आत्म-ज्ञानी प्रत्येक प्राणी हो सकता है चाहे वह स्त्री हो या पुरुष हो, क्योंकि आत्मा सबकी बराबर होती है। ऐसा उत्तर सुनकर रानी को बड़ी प्रसन्नता होती थी रानी ने इसी प्रकार से राजा की अपने योगबल से कई प्रकार की परीक्षा ली।

जब रानी राजा के दृढ़ भावों से प्रसन्न होती है तब कुम्भज ही चूड़ाला के रूप में राजा के सामने प्रगट हो गई। राजा को चूड़ाला को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। काफी समय के बाद वह चूड़ाला को पहचान सका। राजा उससे बहुत प्रसन्न हुए और उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट की। रानी के कहने से राजा अपनी राजधानी को वापिस आकर जीवन मुक्त रहते हुए राज्य करने लगे। बहुत काल तक भली-भांति राज्य करके प्रजा को सुखी करके विदेह मुक्त हो गये।

इस प्रकार इस कथा को सुनकर श्री रामचन्द्रजी बहुत प्रसन्न हुए। वशिष्ठजी ने कहा हे राम स्त्रियों को निरादर की दृष्टि से न देखो। जो अच्छे कुल की स्त्रियाँ होती हैं वे अपने पति को संसार-सागर से पार करने में मदद करती हैं।

योग-वशिष्ठ में कहा है :—

मोहादनादि गहना-
दनन्त गहना दपि।
पतितं व्यवसायिन्यस्ता-
रयन्ति कुलस्त्रियः ॥१॥
शास्त्रार्थ गुरुमन्त्रादि-
तथा नोत्तारण क्षमम्।
यथैताः स्नेह शालिन्यो-
भर्तॄणां कुलयोषितः ॥२॥
सखा भ्राता सुहृद्भृत्यो-
गुरुर्मित्रं धनं सुखम्।

शास्त्र मायतनं दासः
सर्वं भर्तुः कुलाङ्गनाः ॥३॥
सर्वदा सर्वयत्नेन-
पूजनीया कुलाङ्गनाः ॥
लोक द्वयसुखं सम्य-
क्सर्वं यातु प्रतिष्ठितम् ॥४॥

अर्थात् अनादि, अनंत मोहसागर में गिरे हुए अपने पति को उद्धोधकारिनी कुलाङ्गनाएं पार उतारती हैं।

शास्त्र, गुरु, मंत्र आदि साधन उस मोह सागर से पार करने में इतने समर्थ नहीं हैं, जितनी कि स्नेह से भरी हुई कुलाङ्गनाएं।

वे अपने पति की सखा, बन्धु, मित्र भृत्य, गुरु, धन, सुख, बान्धव, घर, और दास सब कुछ हैं इसलिये सदा सब प्रकार से इनकी पूजा करनी चाहिये क्योंकि इनके ऊपर ही इस लोक और परलोक का सुख पूर्णतया निर्भर है। मनुजी महाराजजी ने भी अपनी स्मृति में कहा है :—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते,
रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैता न पूज्यन्ते,
तत्र सर्वा फलाः क्रियाः ॥

क्योंकि तुलसीदासजी भी अपने रामचरित मानस में कहते हैं :—

कहा न पावक जारि सके,
कहा न समुद्र समाय।
कहा न अबला कर सके,
काल काहि नहिं खाय ॥

टानसेन ने भी स्त्री के विषय में कहा है—

"The Woman's cause is man's"
They rise and sink together.

योगिनी और पतिव्रता स्त्री ही ऊंचे पद को प्राप्त कर सकती है।

अनेक सिद्ध योगियों में पुरुषों समान स्त्रियां भी सिद्ध योगिनी हुई हैं जिनका दिग्दर्शन आजकल भी अनेक रूपों में कहीं-कहीं जगह पर होता रहता है। श्री महाकवि तुलसीदासजी की रामचरित मानस में शबरी का प्रकरण आपने पढ़ा ही होगा—जो गुरुओं के अनुग्रह से पूर्णतया योग सिद्ध थी। योगसिद्ध होते हुए और उसकी सच्ची लगन के फलस्वरूप ही उसको श्री रामचन्द्र भगवान के दिव्य दर्शन अपने आश्रम में प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हुए और अन्त में योगाग्नि के द्वारा ही अपने शरीर को दहन करके ही शबरी ब्रह्म-लीन हुई :—

"तजि योग पावक देह हरिपद-
लीन भई जहँ नहिं फिरे।"

इसी प्रकार श्री शंकरजी की प्रथम पत्नी सतीजी भी योग सिद्धा थीं। यदि उनमें शरीर परिवर्तन की योग क्रिया न होती तो वे श्री सीताजी का स्वरूप धारण कर कैसे श्री रामचन्द्रजी की परीक्षा लेतीं ? फिर उसके बाद अपने पिता दक्ष के यज्ञ में योगाग्नि के द्वारा ही शरीर को त्याग कर सिद्ध योगिनी होने का परिचय दिया :—

रामचरित मानस में कहा है :—

अस कहि योग अगिनि तनु जारा।
भयउ सकल मख हाहाकारा ॥

इसी प्रकार श्री रामचन्द्रजी की अर्धां-

तिनी श्री सीता जी भी योग-सिद्धा थीं। यदि वह योग सिद्धा न होतीं तो किस प्रकार अपने विवाह में योग शक्ति से ही राजा जनक अपने पिता के यहाँ सब प्रकार की सामग्रियाँ एकत्रित करतीं और अपने पति श्री रामचन्द्र जी के सब प्रकार के मानसिक भावों को जानतीं ? पतिव्रता अनुसुइया की कथा तो बड़ी मनोहर है ही :—

उत्तम के अस बस मन माहीं।
सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं॥

श्री सीता जी के बहाने संसार की समस्त स्त्रियों को दिये अपने उपरोक्त उपदेश के अनुसार ही अनुसुइया जी ने अपने मन को पति भक्ति में केन्द्रित कर पति शरीर में पर-ब्रह्म को प्राप्त कर लिया था। इनकी योग सिद्धि का प्रताप तेज सारे विश्व में व्याप्त है।

इसी प्रकार योग सिद्ध नारी ब्रह्मवादिनी ब्रह्मचारिणी गार्गी जी हुई हैं तथा इसी प्रकार महाभारत में योग-सिद्धा अनेक नारियाँ हुई हैं जिनका वर्णन बहुत महान तथा योगयुक्त है।

अतः मन का निर्मल होकर परमात्म-तत्व में लय हो जाना ही पूर्णयोग है। इसका अधिकार पुरुष-स्त्री सभी को है। इसलिये सभी माताओं तथा बहनों को आत्म-कल्याण की दिशा में प्रस्थान करने का श्रीगणेश करके अपने स्वरूप का साक्षात्कार करके इस आवागमन के चक्कर से छूट जाना चाहिये। तथा अपने आपको योगयुक्त बना लेना चाहिये। मैं अपनी माताओं और बहनों से विशेषतः नम्र निवेदन करती हूँ कि वह अवश्य ही अपने आपको योग मार्ग का अनुयायी बनायें और माता अनुसुइया, मदालसा, लक्ष्मी पार्वती आदि की तरह से अपने आप को यौगिक तेज से परिपूर्ण कर लें।

—×०×—

योग-साधन और विद्यार्थी

गुरुकुलों में विद्यार्थियों को गणित, इतिहास, भूगोल, नक्षत्र विद्या, क्षत्र विद्या, देवजन विद्या आदि सिखाई जाती थीं। इन विद्याओं के साथ-साथ विद्यार्थियों को योग-साधन की शिक्षा भी दी जाती थी, यह एक विशेषता थी।

योग के आसन आदि व्यायाम, बिना व्यय के होनेवाले तथा निश्चयरूपेण आरोग्य बढ़ाने वाले हैं। आसन और प्राणायाम से रोग दूर होते हैं, बल बढ़ता है, आयु बढ़ती है और अपूर्व उत्साह बढ़ता है। आज आवश्यकता है इस व्यायाम को विद्यार्थियों के लिए हमारे स्कूलों में अनिवार्य कर देने की। इन योगासनों में कुछ इस प्रकार की योजना है कि जिससे शरीर के सब स्नायुओं का अच्छा व्यायाम होता है। उनका बल बढ़ता है और शरीर में स्थित रोग-बीज दूर होते हैं।

—भारतीय संस्कृति से साभार

योगेश्वर चरित्र-माला

ब्रह्मचारी गोपालानन्दजी

आदरणीय ब्रह्मचारी गोपालानन्दजी के जीवन का आनन्दकन्द योगयोगेश्वर सद्गुरुदेव श्री रामलालजी की लीलाओं में एक विशिष्ट स्थान है। परम करुणार्णव श्री प्रभुजी ने हिमालय से उतर कर जनसाधारण पर जो अनुकम्पायें कीं उन सबका पूर्णरूप से वर्णन करना तो अत्यन्त कठिन है, यद्यपि उस दिव्य-विभूति के चरण-कमलों की ओर आकर्षित प्राणी के मन में उनका लीलामृत पान करने की अभिलाषा रहती है। ब्रह्मचारी गोपालानन्दजी आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के अत्यन्त कृपापात्र थे। उनके जीवन की झाँकी में श्री प्रभुजी की अपार करुणा की झाँकी मिल जाती है। इसी भावना से श्री प्रभुजी से सम्बन्धित उनके चरित्र का रेखांकन किया जा रहा है।

जन्म और बाल्यकाल

ब्रह्मचारीजी का जन्म सम्वत् १९५६ विक्रमी में हल्द्वानी जिला नैनीताल के एक अग्रवाल वैश्य परिवार में हुआ था। उनका बचपन का नाम रामगोपाल था। उनके पिता लाला गोविन्दराम कट्टर आर्य-समाजी विचार के थे। यह आजकल भी समाचार पत्रों के एक पुराने विक्रेता हैं। उनकी बड़ी बहिन रुक्मिणीदेवी से पता चला है कि गर्भवास के समय उनके माता-पिता हल्द्वानी में एक अच्छे महात्मा की सेवा किया करते थे। उन्हीं के आशीर्वाद स्वरूप ब्रह्मचारी गोपालानन्दजी का जन्म हुआ। किसी आर्य विद्वान ने नामकरण के समय पर उनकी जिह्वा पर 'ॐ' लिखा था। आर्य-समाज के प्रभाव से बचपन में ही इनकी दिनचर्या में नैत्यिक अग्निहोत्र और सन्ध्योपासना ने स्थान जमा लिया था। बचपन में ही उन्होंने प्रतिभा का परिचय दिया और १२ वर्ष की अवस्था में ही आयुर्वेद में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। १६-१७ वर्ष की आयु में उन पर महात्मा गांधीजी का प्रभाव पड़ा। वह हाथ के कते-बुने कपड़े का प्रयोग करने लगे। कुछ काल तक उन्होंने आयुर्वेदिक कालेज लाहौर और कुछ समय तक कलकत्ते में रहकर आयुर्वेद शिक्षा की पूर्ण की। अल्पकाल में ही एक अच्छे वैद्य बनकर वह अपने गाँव हल्द्वानी में ही चिकित्सा कार्य करने लगे। यहाँ उन्हें चिकित्सा कार्य में काफी लोकप्रियता प्राप्त हुई।

हठयोगी के दर्शन व सत्संग लाभ

श्री ब्रह्मचारीजी के मन में यौगिक-शिक्षा प्राप्त करने की धुनि बचपन से ही लगी रहा करती थी और आर्य-समाज की शिक्षा के प्रभाव से ब्रह्मचर्य पालन करना व योग विद्या को सुचारु प्रकारेण प्राप्त करना उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया

था। उनके मन में यह लालसा रहती थी कि योग विद्या का पूर्ण वेत्ता कोई सद्गुरु प्राप्त हो और वे इस विद्या को पूर्णतया सीख सकें। वे जहां भी किसी महात्मा का नाम सुनते तो उनके दर्शन के लिये जाते व उनसे योग सम्बन्धी प्रश्न किया करते थे। उन्होंने हलद्वानी के इस अपने अल्पकालीन चिकित्सा काल में ही अनेक महात्माओं के दर्शन प्राप्त किये। उन्हीं में से एक विशिष्ट महात्मा के दर्शन की कथा उल्लेखनीय है, जिन्होंने ब्र०

ब्रह्मचारी श्री गोपालानन्दजी

ब्रह्मचारी जी को अपने अनुभव के आधार पर श्री आनन्दकंद परम करुणार्णव योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी का सद्गुरु रूप से प्राप्त होना तथा उनसे यौगिक शिक्षण पाना पहले से ही निर्धारित कर दिया था। वह महात्मा अल्मोड़ा में पधारे थे। इनकी ख्याति सूर्य के प्रकाश की भाँति अधिकाधिक फैल रही थी। श्री ब्रह्मचारी जी ने जब उनका पवित्र नाम सुना तो अल्मोड़ा उनके दर्शनार्थ गये और लगातार वर्षों तक उनका सत्संग किया। महात्मा जी हठयोगी थे। सत्संग के बाद रात्रिकाल में किसी भी साधारण या असाधारण व्यक्ति को अपने पास बिल्कुल नहीं रहने देते थे। ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी के मन में उनकी रात्रि-चर्या देखने की तीव्र अभिलाषा थी। अतः एक दिन अवकाश पा करके ब्रह्मचारी जी रात्रि को उसी वृक्ष पर बैठ कर छुप गये जिसके नीचे महात्मा जी अपनी क्रियायें किया करते थे। उस रात्रि श्री ब्रह्मचारी जी ने एक अद्भुत आश्चर्य देखा। महात्मा जी ने पहले नेती धौति आदि यौगिक हठकर्म किये और इसके पश्चात् शीर्षासन लगाकर खड़े हो गये। प्राणायाम के बल से महात्मा जी का आसन धीरे-धीरे ऊपर उठना प्रारम्भ हुआ और वृक्ष की कोपलों तक पहुँच गये और ज्यों-ज्यों प्रातःकाल होता गया त्यों-त्यों शनैः शनैः उनका आसन जमीन पर आ गया। महात्मा जी की समाधि खुल गई वे दिन के अपने नैतिक कार्यों में लग गये। इधर ब्रह्मचारी जी भी चुपचाप उठ वृक्ष से उतर कर अपने स्थान को चले गये। वह इन्हीं महात्मा जी को पूर्ण रूप से आत्म समर्पण कर देने का अपने मन में दृढ़ निश्चय लेकर मध्याह्नोत्तर समय में ब्रह्मचारी जी के नैत्यिक सत्संग में आये और महात्मा जी के सामने अपने विचार रखे। ब्रह्मचारी जी के पवित्र विचारों को सुनकर महात्मा जी ध्यानमग्न हो गये और कुछ काल बाद प्रसन्नता से बोले-बेटा! तुम अधिकारी अवश्य हो, पर मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूं। कुछ समय बाद तुम्हें परिपूर्ण गुरु की प्राप्ति होगी। उनका गौर वर्ण है, पंजाबी शरीर है। दीन जनों के उपकार के लिए वे हिमालय से उतर कर आयेंगे। उन्हीं के द्वारा तुम्हारा पूर्ण कल्याण होगा। महात्मा जी की भविष्यवाणी ने ब्रह्मचारी जी के मन में और भी अधिकाधिक उत्कंठा उत्पन्न कर दी और वे इस उज्ज्वल भविष्य की प्रतीक्षा में रहने लगे। इस समय तक ब्रह्मचारी जी इलाहाबाद निवासियों में बहुत बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे, परन्तु फिर भी अपने बह-नोई डा० बद्रीप्रसाद के परामर्श से मुरादाबाद रहने लगे। उन्होंने वहाँ भी अपना चिकित्सा का कार्य प्रारम्भ कर दिया। मुरादाबाद में रहते हुए ब्रह्मचारी जी को एक और महात्मा का सत्संग-लाभ हुआ। यह महात्मा अच्छे शक्ति सम्पन्न थे किन्तु उनका स्वभाव कुछ कड़ा था। ब्रह्मचारी जी उनसे भयभीत रहते थे वह किसी करुणार्णव योगिराज की तलाश में थे।

जापर जाका सत्य सनेहू।
सो तेहि मिले न कछु संदेहू॥

श्री प्रभुजी से भेंट

सच्ची लगन में ईश्वर का वास रहता है। वह किसी कार्यवश सहारनपुर गये हुए थे। वहाँ सद्गुरुदेव योगयोगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज पधारे हुए थे। ब्रह्मचारी जी ने उनकी पतित पावनी कीर्ति सुनी और दर्शन के लिए गये। गुरु पूर्णिमा का दिन था। भक्त मण्डली ने श्री आनन्दकन्द महाप्रभु के दर्शन और पूजन के लिये मोतिया, चमेली, गुलाब आदि के सुगन्धित पुष्पों का सिंहासन तैयार किया गया। वह रेशमी वस्त्र और पुष्प मालाओं से अद्भुत ढंग से सजाया गया था। वेद-ध्वनि और मंगलगान के साथ श्री प्रभुजी को दही, दूध, गंगा-जल आदि से स्नान कराया जारहा था। भक्त लोग उन्हें पहनाने के लिये दिव्य पीताम्बर और नाना प्रकार के आभूषण आदि लिये खड़े थे। वेद विधि से उनका पूजन किया गया। आरती उतारी गई।

एक ओर बैठकर डा० रामगोपाल यह सब तमाशा देख रहे थे। उनके आर्यसमाजी अंतःकरण में एक हलचल मची हुई थी। वह सोच रहे थे यह सब ब्राह्मणों की पाप लीला है। थोड़ी देर यह दृश्य देखकर मन में अविश्वास की भावना का एक द्वन्द लेकर चल पड़े। परन्तु मनुष्य के गर्भ में क्या है ? उसे कब क्या मिल जाता है इसे कोई नहीं जानता थोड़ी दूर जाने पर उनके एक मित्र मिल गये। वह आनन्दकंद श्री प्रभुजी की प्रभुता से भली प्रकार परिचित थे। डा० रामगोपाल को उदास देखकर उन्होंने कारण पूछा तो रामगोपाल ने कहा क्या बताऊ भाई ! जहाँ देखता हूं पाखंड और बाह्याडम्बर के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं पड़ता। एक योगिराज के दर्शनार्थ गया था सोचा वहां कुछ शान्ति मिलेगी किन्तु वहां भी सब आडम्बर दिखाई पड़ा। मेरे गुरु का स्वभाव बड़ा कड़ा है। जब उन्हें अपनी दिव्य-दृष्टि से यह पता चलेगा कि मैं किसी योगी की शरण में गया था तो वह मुझे अवश्य शाप देंगे।

मित्र समझ गये। उन्होंने गम्भीरता से कहा—डाक्टर साहब आप भूल में है। जिन योगिराज के पास आप गये थे वह अतुल शक्ति सम्पन्न योगी हैं। आप थोड़ी देर ठहर जाइये। मैं उनसे आज्ञा लेकर आता हूं और उनके पास आपको ले चलता हूं उनके निकट सम्पर्क में आने पर आप कृतार्थ हो जायेंगे। आपका उज्ज्वल भविष्य अवश्य आपका साथ देगा। यह कहकर उनको पास के उद्यान में बिठाकर महाप्रभु जी के चरणकमलों में आये और प्रार्थना की कि हे प्रभो डा० रामगोपाल आपके चरणों में बड़ी आशा लेकर आये थे और निराश लौटे जा रहे है आप इन्हें अपने चरणकमलों का अवलम्बन देकर कृतार्थ करें सत्संगी का दीन वचन सुनकर महाप्रभुजीने कहा उन्हें बुला लाओ। सत्संगी मित्र उमंग से दौड़ गये और उन्हें महा प्रभुजी के पास लिवा लाये। महाप्रभुजी

ने उन पर दृष्टि डाली और उनके मनोभावों को समझ लिया। उन्होंने हँसते हुए कहा— भाई यहाँ तुम्हारी श्रद्धा कैसे होगी। तुम किसी ऐसे योगीराज महात्माको ढूँढो जिसके सिर पर लम्बी जटायें हो, चेहरे पर विभूति हो, जो दम्भ से रहित हो। अपने मनके भावों को इस प्रकार प्रभुजी के मुख से व्यक्त होते देखकर डा० रामगोपाल जी के हृदय में श्रद्धा का समुद्र उमड़ पड़ा। उन्होंने हाथ जोड़कर प्रार्थना की। प्रभु मैं आपके वास्तविक स्वरूप को नहीं समझ सका। ऊपरी चीजों को देखकर मेरा मन अपने दम्भ में बह गया। मुझे क्षमा करें। मैं आपका एक दीन बालक हूं।

अहैतुकी कृपा का प्रभाव

उनकी दीन वाणी सुनकर दीनबन्धु प्रभु का हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने मिट्टी की एक डेली उठाकर उन्हें दे दी और कहा इसे खा जाओ। एकान्त में बैठकर अपने गुरु के बताये मन्त्र का जप और ध्यान करो। श्रद्धापूर्वक वह डेली मुँह में डाल कर डा० रामगोपाल ध्यान में बैठ गये। उनका हृदय आनन्द से भर उठा। कठोपनिषद् का मन्त्र उनकी आँखों में नाच गया।

> नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो,
> न मेधया न बहुना श्रुतेन।
> यमेवैष वृणुते तेन लभ्य-
> स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूँ स्वाम्॥

अर्थात् प्रभु के स्वरूप को पहचान लेना मनुष्य के अपने पुरुषार्थ से परे है। जिस पर वह कृपा स्वयं करते हैं वही जान पाते हैं।

> सो जाने जिन देहु जनाई।

श्री प्रभुजी से मिट्टी की डेली का वह प्रसाद पाकर डा० रामगोपाल धन्य हो गये। उन्हें सम्प्रज्ञात समाधि के अतुल प्रकाश का अनुभव हुआ। श्रुति वाक्य का यह प्रकाश उनके सामने साक्षात् प्रकट हो गया।

> न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं
> नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
> तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
> तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥

अर्थात् उस प्रकाश स्वरूप प्रभु के अतुल प्रकाश के सामने न सूर्य चमक सकता है, न चन्द्रमा, न तारागण, अग्नि की तो बात ही क्या? उसी के प्रकाश से यह सारा विश्व प्रकाशित हो रहा है।

कृतकृत्य होकर डा० जी ने श्री प्रभु के चरण कमलों में दण्डवत् किया और अपने गुरु के स्थान को लौट पड़े। उनके गुरुदेव ने अपनी यौगिक शक्ति से पहले ही जान लिया था। उनका हृदय क्षुब्ध था। डा० रामगोपाल को देखकर वह बिगड़ उठे। उन्होंने रोषपूर्वक कहा कि तुम्हें गुरु तो परिपूर्ण मिल गये हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। वह पूर्ण सिद्ध योगिराज हैं। किन्तु यहाँ का भी तो कुछ प्रसाद लेता जा। आज से शेष जीवन में:—

१. तू जीवन भर रोगी रहेगा।

२. तेरी औषधियों में विष हो जायेगा और चिकित्सा कार्य में विफल रहेगा।

३. जीवन भर तू दरिद्र रहेगा।

४. अन्त में तू सद्गति को नहीं पासकेगा।

सहसा तीन चार शाप एक साथ मिल-गये। डा० रामगोपाल का हृदय कांप उठा। शाप पाते ही वह बीमार पड़ गये। उन्हें तीव्र ज्वर हो गया। प्रभु उस दिन अमृतसर चले गये थे। जब ज्वर का वेग कुछ कम हुआ तो डाक्टर ने श्री प्रभुजी को एक पत्र लिखा जिसमें शापों की कथा विस्तार से लिख दी। भक्त हितकारी दीनदयाल श्री प्रभुजी ने लौटती डाक से उत्तर दिया उसमें लिखा था कि चिरंजीव नेपाल वाले देवों के देव महादेव सदा शिव लम्बा चिमटा लिये सदैव तुम्हारे साथ हैं। महात्मा ने तुम्हें जो शाप दिया है उनका भुगतान उसी दिन दोप-हर १२ बजे से रात ८ बजे तक कर दिया गया है। अब तुम स्वस्थ होगे। मेरा पत्र पाने के बाद उन शापों का विपरीत फल होगा।

१. जीवन भर तुम स्वस्थ रहोगे।

२. तुम्हारी औषधियों में अमृत का वास होगा। अपने चिकित्सा कार्य में तुम सफल होगे।

३. चाहोगे तो इससे बहुत बड़े धनिक बन जाओगे।

४. अन्त में तुम्हें सद्गति प्राप्त होगी।

प्राणीमात्र को अभयदान देने वाले कर्तु-मकर्तु मन्यथाकर्तुं सर्वथाशक्तः। दीनदयाल श्री प्रभुजी ने महात्मा के चारों शापों का आठ घण्टे के भीतर भुगतान कराकर शेष जीवन के लिए डाक्टर रामगोपाल को अभय बना दिया। वह बारम्बार श्री प्रभुजी का पत्र पढ़कर गद्‌गद हो गये। सोचने लगे श्री प्रभुजी ने लिखा है तुम चाहोगे तो धनि धनिक भी बन जाओगे। सो मैं धनिक कैसे बनूंगा। उन्होंने ध्यान में बैठकर प्रभुजी से प्रार्थना की हे प्रभो! मैं धनवान कैसे बनूंगा? उसका उपाय बताइए। प्रभुजीने आदेश दिया सामने देखो। देखने पर सामने एक आयुर्वे-दिक योग पाया जिसमें कई विषों का मिश्रण था। श्री प्रभुजी ने आज्ञा दी इस योग को तुम नोट करलो। इसे उच्च अधिकारियों से स्वीकृति प्राप्त कर बना लेना। तुम्हारा यह योग अमृतधारा और सुधासिन्धु आदि की भांति संसार में विख्यात होकर चलेगा। तुम इससे लाखों के मालिक बन जाओगे। डा० रामगोपाल ने वह नुस्खा लिख लिया। और उच्च अधिकारियों से उसको बनाने की स्वीकृति भी प्राप्त करली किन्तु धनाभाव के कारण उसे बना न सके। अतः खिन्न मन से पुनः ध्यानावस्थित होकर श्री प्रभुजी से पूछा कि प्रभो इसे धनाभाव से नहीं बना सकता हूं, तो इसके बनाने के लिये क्या उपाय करूं पुनः पहली भांति सामने देखने की आज्ञा हुई। सामने एक आदमी दिखाई पड़ा। उसे दिखा-कर श्री प्रभुजीने कहा—कल नौ बजे यह मनुष्य तुम्हारे पास कुछ धन राशि लेकर आवेगा। उससे रुपये लेकर औषधि तैयार करना। इसकी इच्छा तुम्हारी औषधि व्यवसाय में

हिस्सेदार बनने की है। तुम इसे कुछ समय के लिये हिस्सेदार बना लेना। दूसरे दिन ठीक समय पर वह आदमी धन राशि लेकर उपस्थित हुआ। उसने डा० रामगोपाल से साझीदार बनने की इच्छा प्रकट की। उसी समय डाक्टर के मन में एक प्रेरणा हुई। वह सोचने लगे धनी बनने और निर्धन रहने का वास्तविक परिणाम क्या होगा। यह बात मुझे अवश्य विचार कर लेनी चाहिये। वह अन्दर कमरे में चले गये और ध्यान में बैठ गये। श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि मुझे यह बतला दीजिये कि धनवान बनने से क्या परिणाम होगा और निर्धन रहकर साधु जीवन व्यतीत करने से क्या परिणाम होगा। और मेरे लिये कौन सा मार्ग शुभ होगा।

जीवन दर्शन

श्री प्रभुजी ने डाक्टर रामगोपाल को पहले धन का परिणाम दिखाया। डा० ने अपने पास लाखों की सम्पत्ति देखी। स्त्री-पुत्रों को देखा और मन में बढ़ी हुई धन की लोलुपता का दर्शन किया। इसके फलस्वरूप अपने आपको सर्प योनि प्राप्त होते देखा तथा धन से दुर्गन्ध और भी अनेक कुकृत्यों और उनके परिणामों को देखा। फिर निर्धन जीवन का दृश्य देखने लगे। उन्होंने देखा वह एक निर्धन साधु हैं। संकीर्तन करा रहे हैं। आस पास हजारों की भीड़ है उनकी संकीर्तन ध्वनि से उन सबके भीतर शक्तिपात हो रहा है। सब भगवत चरणानुरागी बनकर कृतार्थ हो रहे हैं। दूसरी अवस्था में अपने को जंगल में बैठे देखा। झंझावात चल रहा है। ऊपर से ओले बरस रहे हैं किन्तु उन्हें कोई दुःख नहीं महसूस हो रहा है। वे श्रीकृष्ण के प्रेम में विभोर हैं। सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हो गये हैं। उनको भागवतरूप प्रभुजी के निकट स्थान मिल गया है। इतने अनुभव के बाद वह समाधि से उठे। उनके हृदय से वासना की बेलि कट चुकी थी। उन्होंने उस मनुष्य को धन राशि लौटा दी। उनके अन्तःकरण में वैराग्य का सागर उमड़ पड़ा। वह अपने को रोक नहीं सके। अपने औषधालय की सब औषधियों को इकट्ठा बांध कर ज्ञानानन्द श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ अमृतसर पहुंच गये।

डा० रामगोपाल को परम विरक्त भाव से आया हुआ देखकर श्री प्रभुजी ने उन पर अपनी अहैतुकी करुणा की वर्षा की। प्रसन्न होकर कहा—"बेटा! अब तुम्हारा सब प्रकार से कल्याण होगा। तुम लाखों दुःखी-जीवों के कल्याण का कारण बनोगे। ठीक उसी समय रामगोपाल जी ने देखा कि उनके पिता आये हुए हैं और वे रोषमुद्रा में खड़े कह रहे हैं कि मेरा एक ही बच्चा है, वह साधु हो जायेगा तो हमारा वंशोच्छेद हो जायेगा। उसे गृहस्थ बनकर लोक-जीवन का पालन करना चाहिए। उन्होंने श्री प्रभुजी से प्रार्थना की—"प्रभो! यह क्या हो रहा है?" श्री प्रभुजी ने कहा—यह तेरे कल्याण के लिए है, इससे तेरा परम कल्याण होगा। धीरे-धीरे डा० के पिता गोविन्दराम का

मनोबल बढ़ने लगा। पुत्र की तीव्र वैराग्य और परोपकार की भावना से पिघल कर उन्होंने उन्हें ब्रह्मचर्य धारण करने की आज्ञा दे दी। उनके लिए स्वयं वस्त्र खरीदकर उसे स्वयं अपने हाथों से रंग कर श्री प्रभुजी से उन्हें दीक्षा देने का स्वयं आग्रह किया।

ब्रह्मचारी गोपालानन्द

अब डा० रामगोपाल ब्रह्मचारी गोपालानन्द बन गये। उन्हें ध्यानावस्था में हिमालय के बड़े-बड़े सिद्धों और ऋषियों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। उनके परोपकार की तीव्र भावना, गुरु-भक्ति और ईश्वर-भक्ति के उमड़ते हुए प्रभाव को देखकर श्री प्रभुजी ने आशीर्वाद दिया—बेटा, अब तुम संसार के लाखों जीवों के कल्याण का कारण बनोगे। तुम्हारे रोम-रोम में भगवान श्रीकृष्ण का प्रेम व्याप्त हो जायेगा। उस प्रेम की विह्वलता में तुम हरि-कीर्तन कराओगे। तुम्हारे संकीर्तन में शक्ति का संचार होगा। तुम्हारे द्वारा कराया गया संकीर्तन थोड़े समय बाद भारत के कोने-कोने में फैल जायेगा। देश-विदेश के लाखों प्राणी इस संकीर्तन में डुबकी लगा कर भगवत्-चरणानुरागी बनकर कृतार्थ होंगे। इस वरदान के बाद स्वामी गोपालानन्द के जीवन में आश्चर्यजनक घटनायें घटीं। जिनका वर्णन हम आगे करेंगे। श्री ब्रह्मचारीजी प्रभुजी के ध्यान में अहर्निश मग्न रहने लगे। बीच-बीच में श्री प्रभुजी उन्हें एकान्तवास के लिए वनों में भेज दिया करते थे। उनकी ध्यान स्थिति इतनी ऊंची बढ़ी कि वे बाह्यबोध शून्य होकर हर समय समाधि में लीन रहने लगे।

इस स्थिति में एक बार अपने बहनोई चण्डीप्रसाद के आग्रह से श्री प्रभुजी की आज्ञा प्राप्त कर मुरादाबाद गये। श्री प्रभुजी के चरण कमलों को छोड़कर जाना यद्यपि श्री ब्रह्मचारीजी को असह्य था। फिर भी 'गुरोराज्ञा बलीयसी' के कथनानुसार व श्री प्रभुजी की आज्ञा का उल्लंघन करके मुरादाबाद चले गये। मुरादाबाद जाने के बाद कृपानिधि श्री प्रभुजी के विरह से उनका भावोद्रेक व समाधि की प्रगाढ़ता दिन-प्रति-दिन और भी बढ़ती गई। वह यहाँ तक पहुंची कि कई बार सत्संग में आनेवाले जनसाधारण उनके शरीर को मृत समझ लेते थे। एक बार ब्रह्मचारी जी के समाधिमग्न हो जाने के बाद उनके बहनोई डा० चण्डीप्रसाद को स्वयं भी यह भ्रम हुआ। उन्होंने अनेक प्रकार के परीक्षणों के बाद ब्रह्मचारीजी के शरीर को मृत समझा। उन्होंने श्री प्रभुजी को अर्जेण्ट तार दे करके पूछा कि श्री ब्रह्मचारी जी ने शरीर त्याग दिया है, क्या उनके शरीर का संस्कार कर दिया जाय? उनके शरीर के विषय में आपकी क्या आज्ञा है? श्री प्रभुजी ने तार का उत्तर दिया, तुम कोई चिन्ता मत करो। गोपालानन्द जिन्दा है। पांच दिन में वह समाधि से उठ जावेगा। उसके शरीर को किसी हवादार कमरे में डाल दो। पांच दिन के बाद जब वह उठे तुम उसको दूध पिला देना। श्री प्रभुजी के कथना-

नुसार वैसा ही हुआ। और पांच दिन के बाद श्री ब्रह्मचारी जी समाधि से उठे। मुरादाबादवासी सभी सत्संगियों को अतिशय आश्चर्य हुआ और उन्होंने श्री प्रभुजी की अनुपम कृपा को समझा। कुछ समय बाद श्री ब्रह्मचारी मुरादाबाद से चलकर श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में पहुंच गये।

सेवा–कार्य

कुछ समय पश्चात श्री प्रभुजी ने स्वदेश स्वामी मूलखराज तथा श्री ब्रह्मचारीजी को योग-प्रचार के लिये लाहौर भेज दिया। लाहौर में इनका प्रचार कार्य खूब बढ़ा। इनके प्रचार कार्य के तीन भाग थे।

१. साध्य और असाध्य सभी प्रकार के रोगियों की योग-साधनों द्वारा चिकित्सा।

२. आने वाले जिज्ञासू समुदाय को परम कल्याणमय योग-मार्ग का उपदेश देना व सभी प्रकार के योग-साधनों की शिक्षा देना।

३. आरती स्तुति के साथ हरिनाम संकीर्तन कराना।

श्री ब्रह्मचारीजी के मुख से निकली नाम-ध्वनि इतनी भावपूर्ण होती थी कि उनके सत्संग में आने वाला हर एक व्यक्ति गद्गद् होकर ध्यानमग्न हो जाया करता था और बिना दीक्षा के अनेकों को ऊंची-ऊंची ध्यान-स्थितियाँ बन जाती थीं। उस समय उनके लाहौर के योग-साधन आश्रम में प्रतिदिन रात्रि के सत्संग में लगभग दो सौ व्यक्ति भाग लेते थे। जो प्रायः सभी नाम-संकीर्तन करते हुए बेहोश हो जाते थे। इस अद्भुत संकीर्तन-प्रभाव से लाहौर शहर में लगभग दो सौ संकीर्तन मंडलियां कायम हुईं। शनैः-शनैः यह संकीर्तन आगे बढ़ता गया और अमृतसर, लुधियाना, जालंधर तथा इसी प्रकार यू. पी., सी. पी., बिहार आदि में भी इसका प्रचार हो गया। ब्रह्मचारी जी के मुखारविन्द से निकली हुई :—

गोविन्द जै-जै, गोपाल जै-जै,
राधारमण हरि गोविन्द जै-जै।
राधे श्याम, राधे श्याम,
श्याम श्याम राधेश्याम॥
राधाकृष्णा राधाकृष्णा,
कृष्णा कृष्णा राधे-राधे।

की ध्वनियाँ आज भारत के कोने-कोने में व्यापक हो चुकी है। लगभग दो साल तक श्री ब्रह्मचारी जी के संकीर्तन का प्रभाव लाहौर में चलता रहा। समय का परिवर्तन हुआ और आनन्दकंद प्रभुजी ने किन्हीं कारणों से ब्रह्मचारी जी का लाहौर में रहना उचित नहीं समझा। उन्होंने उन्हें एक सांकेतिक आज्ञा दी कि जिस समय तुम्हें मेरा कोरे कागज का लिफाफा मिले तुम लाहौर छोड़कर मुरादाबाद चले जाना। ऋषिकेश से श्री प्रभुजी का कोरे कागज का लिफाफा शीघ्र ही ब्रह्मचारी जी को मिल गया। वे लाहौर छोड़कर मुरादाबाद चले आये।

अन्तिम काल

मुरादाबाद में उन्होंने अपने जीवन को

और भी तपोमय बना लिया। दिन भर का स्वाध्याय, ध्यान, समाधि और रात्रि में ७ बजे से १२ बजे तक ५ घण्टे का अनवरत सत्संग और संकीर्तन उनका प्रत्येक दिन का कार्य-क्रम था इससे पर भी तिमंजले मकान के ऊपर माघ मास के प्रबल शीत में शेष रात्रि तपश्चर्या में ही व्यतीत करते थे। दो मास के इस कठिन तपश्चर्या के बाद उनका वह समय आ गया, जिसका संकेत वह श्री प्रभुजी के द्वारा लाहौर में पा चुके थे। एक मास पूर्व ही वह इसका संकेत कर रहे थे। आज उनका मुख-मंडल और दिनों की अपेक्षा अधिक प्रसन्न और तेजोमय था। दिन का सम्पूर्ण कार्य-क्रम बाकायदा चालू रहा। रात्रि के सत्संग में उन्होंने यह सूचना दी कि आज इस शरीर का वह कार्य पूरा होगा जो अब तक नहीं हुआ। सत्संग में आने वाले भक्त उनका आशय समझ नहीं सके। उनके मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि आज वह कोई अलौकिक शक्ति प्राप्त करेंगे। सत्संगी खुशी-खुशी प्रसाद लेकर घर चले गये। श्री ब्रह्मचारी जी ने खूब प्रसन्नता से सबको प्रसाद और विदाई दी सबके चले जाने के बाद वहाँ से निवृत्त होकर ध्यानावस्थित हो गये। थोड़ी देर में श्वास की ऊर्ध्वगति हुई और उनकी आत्मा ने नश्वर देह का त्याग कर दिया। प्रातःकाल जब नगर में उनकी मृत्यु का समाचार फैला तो लोगों को उनके संकेत का अर्थ समझ में आया।

आनन्दकंद श्री प्रभुजी की कृपा से श्री ब्रह्मचारी जी का सम्पूर्ण जीवन तपोमय व्यतीत हुआ। उनके शरीर का रोम-रोम श्री कृष्ण के प्रेम में विभोर रहा। अन्तिम समय में वे कृष्णमय होकर देवलोकवासी हुए।

व्रतेन दीक्षमाप्नोति दीक्षमाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धयाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

—यजुर्वेद अ० १९ मन्त्र ३०

अर्थात् जब मनुष्य धर्म को जानने की इच्छा करता है तभी सत्य को जानता है, उसी सत्य में मनुष्य को श्रद्धा करनी चाहिए असत्य में कभी नहीं। जो मनुष्य सत्य के आचरण को दृढ़ता से करता है तब वह दीक्षा अर्थात् उत्तम अधिकार के फल को पाता है। जब मनुष्य उत्तम गुणों से युक्त होता है तभी सब लोग सब प्रकार से उसका सत्कार करते हैं क्योंकि यथार्थ शुभ गुणों से ही उस दक्षिणा को मनुष्य प्राप्त होता है अन्यथा नहीं।

जब ब्रह्मचर्य आदि सत्यव्रतों से अपना व दूसरे मनुष्यों का सत्कार होता दीख पड़ता है तभी उसमें दृढ़ विश्वास होता है। सत्य के आचरण में बढ़ती हुई श्रद्धा से ही सुख और शान्ति प्राप्त होती है।

—ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका से

श्री सद्गुरुदेवजी द्वारा—

समालखामंडी में योग-प्रचार

[हमारे सम्वाददाता द्वारा]

दीपावली के पश्चात् दिनांक ४ नवम्बर को सवाई आश्रम से समालखामण्डी के लिए सद्गुरुदेव योगिराज श्री चन्द्रमोहनजी महाराज ने प्रस्थान किया था। श्री महाराज ५ नवम्बर को लगभग ११ बजे पठानकोट एक्सप्रेस से समालखामण्डी में पहुंचे थे।

श्री गुरुदेवजी भाई दुलीचन्दजी गोयल जो गोशाला के प्रधान हैं के आग्रह पर कई बार गोशाला महोत्सव पर समालखामण्डी पधारे थे। यह प्रोग्राम केवलमात्र २-३ दिन का ही होता था। किन्तु इस बार अन्य भाइयों की प्रबल इच्छा हुई कि श्री गुरुदेवजी का ८-१० दिन का योग-प्रचार कार्यक्रम रखा जाय। अतः भाई दुलीचन्दजी व उनके अन्य साथियों (श्री भाई ओमप्रकाश जयकिशन हलवाई, ओमप्रकाश व्यास, रणजीत अग्रवाल व रोशनलाल आदि) के विशेष आग्रह पर समालखामण्डी में लगभग १० दिन का कार्यक्रम रक्खा था।

समालखामण्डी स्टेशन पर गाड़ी लगभग २ घण्टे देर से पहुंची। अतः सभी भाई-बहिन श्री गुरुदेवजी के आगमन की प्रतीक्षा में थे, जैसे ही गाड़ी स्टेशन पर रुकी तो क्या देखते हैं कि हाथों में मालायें लिए एक जन-समूह प्लेटफार्म पर भागता चला आ रहा है। जयकारों से सम्पूर्ण वायुमण्डल गुञ्जाय-मान हो रहा था। जैसे ही श्री महाराज जी डिब्बे से नीचे उतरे सभी भाई-बहिनों ने उन्हें मालाओं से ढक दिया। श्री गुरुदेव जी मालायें उतारते जाते थे किन्तु मालायें कम नहीं होती थीं। इस प्रकार श्री गुरुदेव जी को प्लेटफार्म से बाहर लाकर एक खुली गाड़ी में जो कि सजाई हुई थी विराजमान किया गया और इतनी बड़ी भीड़ के साथ जलूस प्रारम्भ हुआ। आगे-आगे सुन्दर बैण्ड बाजा मधुर धुनों को बजाता हुआ चल रहा था। श्री गुरुदेव जी के आगे कीर्तन करते हुए सभी भाई-बहिन चल रहे थे। इस प्रकार बहुत व मंडी में घूमते हुए नई अग्रवाल धर्मशाला में पहुंचे जहां बहुत ही सुन्दर व अच्छी व्यव-स्थित थी।

सायंकाल लगभग ५ बजे श्री गुरुदेवजी के आदेशानुसार शामली का बालकृष्ण संकीर्तन मंडल आ गया था। रात्रि को धर्मशाला में ही संकीर्तन का आयोजन रहा था। शामली संकीर्तन मंडल के बारे में बहुत से भाई परिचित हैं, यह सभी श्री गुरुदेवजी के परम भक्त हैं इन्हें जहां भी आज्ञा मिलती है वहीं पहुंचते हैं। मंडल के मधुर संकीर्तन में गुरु-भक्ति के सुन्दर-सुन्दर भजन-कीर्तन आदि को सुनकर समालखामंडी का जनसमाज मंत्र मुग्ध हो गया। उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। यह सब गुरुदेव जी की ही महान कृपा है जिसके कारण मंडल की इतनी ख्याति प्राप्त हुई।

दिनांक ६ नवम्बर को प्रातः लगभग ६ बजे से श्री कृष्ण आदर्श गौशाला के जलूस का आयोजन था। जलूस गौशाला से प्रारम्भ हुआ था। श्री गुरुदेव जी कार द्वारा गौशाला पहुंच गये थे। जलूस में सबसे आगे गौशाला के कर्मचारी गौशाला का नामपट्ट लिये चल रहे थे। उसके बाद एक गाड़ी पर गौशाला का प्रचारक भजन मंडल था जो कि गौशाला के विषयमें भजन आदि गाते चलता था। उसके बाद श्री इन्दु शर्मा भजनोपदेशक रमालावाले अपने सुन्दर-सुन्दर भजन गाते चले आ रहे थे। उसके बाद एक बहुत सुन्दर बैण्ड था जो कि मधुर ध्वनि के साथ बजाता चला आ रहा था, उसके पीछे श्री बालकृष्ण संकीर्तन-मंडल शामली चलता था, उसके बाद ही श्री गुरुदेव जी की भव्य सवारी थी। श्री महाराज जी को एक सुन्दर सजायी गयी गाड़ी पर विराजमान किया गया था। उनके पीछे बहुत बड़ा जनसमुदाय स्त्री-पुरुष जय-जयकार करते हुए चल रहे थे, उनके पश्चात् गौशाला की सुन्दर गायें चल रही थीं। इस प्रकार जलूस गौशाला से प्रारम्भ होकर समानलामण्डी नगर में होता हुआ लगभग ३ घण्टे में वापस गौशाला आया। जलूस में विशेषता यह थी कि शामली मंडल जब भी अपना कीर्तन प्रारम्भ करता था एक जन समूह आस-पास एकत्र हो जाता था। यहां तक कि शहर में आवागमन अवरुद्ध हो जाता था। गायों की स्थान स्थान पर पूजा हुई। उन्हें बस गुड़ आदि खिलाया गया। श्री गुरुदेवजी का भी स्थान-स्थान पर आरती-पूजन किया गया। गौशाला पहुंचने पर भाई दुलीचन्द जी द्वारा गायों की आरती के पश्चात् श्री गुरुदेव जी की आरती की गई, उसके पश्चात् श्री महाराज जी धर्मशाला वापस आ गये।

सत्संग कार्य-क्रम

सत्संग का कार्यक्रम दिनांक ७ नवम्बर से १२ नवम्बर तक अनवरत चलता रहा। श्री गुरुदेवजी का योग-प्रचार कार्यक्रम प्रथम बार था अतः सब कार्य-क्रम नियमपूर्वक चलता था। प्रातःकाल श्री गुरुदेव का भ्रमण कार्य क्रम रहता था उसके पश्चात् स्नानादि से निवृत्त होकर ध्यानाभ्यास चलता था उसके पश्चात् गीता पाठ होता था तत्पश्चात् आरती स्तुति भजनादि के पश्चात् योग-साधनों द्वारा निःशुल्क रोग-चिकित्सा का कार्य-क्रम चलता था। उसके बाद भोजन व श्री गुरुदेव जी का निजी कार्य-क्रम रहता था व साय ३ बजे से स्त्री-सत्संग चलता था। तत्पश्चात् रात्रिको ८से १० बजे तक आरती स्तुति-भजनोपदेश के पश्चात् १ घण्टे महान योग विद्या पर सारगभित प्रवचन होता था। श्री गुरुदेव जी ने प्रारम्भ से ही योग को समझाया। आज तक योग को बतानेवाला कोई भी योगी व महात्मा मण्डी में नहीं आया था। समानलामण्डी के निवासियों ने श्री सद्गुरुदेव जी के मुखारविन्द से योग की महान् विद्या को सरल भाषा में सुना व समझा। इस महान् विद्या को सुनकर सभी लोगों ने अपने को धन्य किया।

संगीत-कार्य-क्रम

कार्य-क्रम में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक संगीत कार्य क्रम बहुत ही उत्तम रहा । विशेष-तया बहिन उमा शर्मा के संगीतमय उपदेशों ने तो एक अपूर्व आनन्द ही लाया हुआ था । मुझे काफी समय के पश्चात बहिन उमा शर्मा का संगीत सुनने का अवसर मिला था । जब वह गाती थीं तो सभी श्रोतागण मन्त्र मुग्ध हो जाया करते थे । उनके भजनोपदेश श्री आनन्दकन्द प्रभुजी की गाथाओं से पूर्ण होने के कारण अत्यन्त मधुर लगते थे तथा शास्त्रीय संगीत की पुष्टियों के कारण भी उनमें मधु-रता अधिक हो जाती थी । यह कार्य-क्रम साय-काल ३ से ५ बजे तक व रात्रि में ८ से ९ बजे तक अनवरत चलता रहता था । श्री पं० इन्दु शर्मा रमाला वालों के प्रभु महिमा के भजन व वीर गाथायें भी श्रोताओं को प्रभावित करती थीं ।

भोजन व्यवस्था

सभी भाइयों ने मिलकर भोजन व्यवस्था अति उत्तम की थी । श्री गुरुदेव जी का व उनके साथ आश्रम से आये साधकों का भोजन अलग बनता था । और अन्य भाइयों के लिये अलग प्रबन्ध किया हुआ था । जो श्री गुरुदेव जी के दर्शनार्थ समालखामंडी के आसपास से गुरु-भाई-बहिनें आते थे उन सभी को प्रेमपूर्वक भोजन कराया जाता था । रोजाना ४०-५० व्यक्तियों का भोजन बनता था ।

विदाई कार्य-क्रम

इस प्रकार वह समय भी आ गया जब समालखामंडी वालों को अपने जीवनाधार सद्गुरु जी को विदाई देनी पड़ी । आगामी प्रोग्राम बुलन्दशहर के लिये था भाई श्री दुष्यन्तसिंह जेलर जिला कारागार ने २ कारें भेजी थीं जो कि समालखा १४ ता० को प्रातः ९ बजे पहुंच गयी थीं । विदाई का दृश्य भी अपूर्व था । समालखामंडी के सभी भाई-बहिनों ने जिसमें भाई दुलीचन्द गोयल (भाई जी) श्री ओमप्रकाश, जय-किशन, हलवाई, रणजीत अग्रवाल, ओम-प्रकाश व्यास, रोशनलाल व श्री जय भगवान आदि मुख्य थे अपने प्यारे गुरुदेव को हार्दिक विदाई दी । सब की आंखें आंसुओं से भरी हुई थीं व सभी श्री गुरुदेव जी के चरणों को पकड़ कर छोड़ना नहीं चाहते थे । इस प्रकार आरती-स्तुति के पश्चात् श्री गुरुदेवजी ने लगभग १२ बजे प्रस्थान किया ।

शक्ति का स्रोत

ब्रह्मचर्य, जीवन की साधना है, अमरत्व की साधना है । महापुरुषों ने कहा है—ब्रह्मचर्य जीवन है, वासना मृत्यु है । ब्रह्मचर्य अमृत है, वासना विष । ब्रह्मचर्य अनन्त शान्ति है, अनुपम सुख है, वासना अशान्ति एवं दुःख का अथाह सागर । ब्रह्मचर्य शुद्ध ज्योति है, वासना कालिमा । ब्रह्मचर्य ज्ञान-विज्ञान है, वासना भ्रान्ति एवं अज्ञान । ब्रह्म-चर्य अजेय शक्ति है, अनन्त बल है, वासना जीवन की दुर्बलता, कायरता एवं नपुंसकता ।

—उपाध्याय श्री अमर मुनि

बुलन्दशहर में योग-प्रचार समारोह

श्री गुरुदेवजी का भव्य-स्वागत

[हमारे सम्वाददाता द्वारा]

श्री कुलवन्तसिंह श्री सीसोदिया जेलर व बहिन श्रीमती सुशीलादेवी जी की विनम्र विनय को स्वीकार करके बुलन्दशहर के नवीन योग-प्रचार कार्यक्रम की स्वीकृति परम कल्याण पद श्री सद्गुरु देव योगिराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज ने दिनांक १४-१२-७० से २२-१२-७० तक की प्रदान की थी अतः श्री गुरुदेव भगवान समालखामंडी का योग-प्रचार कार्यक्रम जो लगभग २० दिन का था समाप्त करके १४ ता० को ४½ बजे सायं बुलन्दशहर पहुँचे थे। श्री महाराज जी को लेने के लिये श्री सीसोदियाजी के सुपुत्र दिनेशकुमार जी कार लेकर प्रातःकाल ८ बजे समालखामंडी पहुंच गये थे। जैसे ही गुरुदेव भगवान की सवारी जिला कारागार से लगभग १-१½ मील थी तब श्री कुलवन्तसिंहजी व अन्यान्य कर्मचारी एवं सम्भ्रान्त नागरिकों के समूह ने गगन-भेदी जय-जयकारों व पुष्प मालाओं से श्री महाराज जी का हार्दिक स्वागत किया। तत्पश्चात् वहाँ से बैण्ड बाजे (पुलिस बैण्ड) व कीर्तन मंडलियों के साथ जलूस के रूप में नगरगलि में श्री महाराज जी की सवारी चल पड़ी जो स्थान-स्थान पर आरती उतारती चली गई। सभी धर्मों के जनसमूह ने निःसंकोच श्री महाराज का हार्दिक अभिनन्दन किया। इस प्रकार श्री महाराज जी की सवारी लगभग १ घण्टे में जेलर साहब के निवास स्थान पर पहुँची जहाँ २१ बन्दूकों की सलामी

बुलन्दशहर आगमन पर श्री गुरुदेव भगवान कार में शोभायात्रा के रूप में आते हुए

द्वारा स्वागत किया गया। जिला कारागार के सभी अधिकारी मालायें लिये हुए पंक्ति बद्ध उपस्थित थे। मुख्य द्वार सुरुचि पूर्ण ढंग से सजाया गया था। बिजली के जगमगाहट से ऐसा प्रतीत होता था मानो भव्य दीपमालिका मनाई जा रही हो। सुन्दर ढंग का दरवाजा उस में बल्बों की सजावट मन को मोहने वाली थी। जैसे ही श्री गुरुदेव भगवान ने कार से उतर कर गृह-प्रवेश किया तो बहिन सुशीलादेवी जी एवं श्री सीसोदिया जी ने अपने आदरणीय गुरुदेव जी का तिलक करके भव्य आरती की। आरती करते-करते ही वह ध्यानमग्न हो गयी जिन्हें श्री गुरुदेव जी ने ही सचेत किया। बहिन सुशीलादेवी जी की ध्यान-स्थिति श्री गुरुदेव जी की परम अनुकम्पा से चल रही थी। उनके ध्यानानुभव के विषय में आप गतांक में सविस्तार पढ़ ही चुके होंगे किन्तु फिर भी इतनी पुनरावृत्ति करनी आवश्यक है कि उनके ध्यानानुभव इतने विलक्षण एवं सत्य

श्री गुरुदेवजी ने जैसे ही श्री सीसोदिया जी के निवास-गृह में प्रवेश किया वैसे ही उन्हें २१ बन्दूकों की सलामी दी गई।

हैं। श्री गुरुदेव भगवान के साक्षात् का पूर्ण अनुभव श्री सीसोदिया जी के पूरे परिवार को मिलता रहता है। आश्चर्य तो यह है कि इतनी उच्च स्थिति पाकर भी उनमें अहंकार लेशमात्र भी देखने को नहीं मिला। जेलर महोदय बुलन्दशहर से पहिले आगरा जिला कारागार के जेलर थे और वहाँ भी इनका योग-प्रचार का पुरुषार्थ सराहनीय था। सैकड़ों भाई-बहिनों को आनन्दकन्द प्रभुजी की शरण में लाने के निमित्त बने। आगरा जेलके कई एक बन्दियों ने भी महाराजजी की शरण ग्रहण की। उनकी ध्यान-स्थिति बनी और उनको प्रत्यक्ष लाभ हुआ।

इसी प्रकार से श्री प्रभुजी के कृपा स्वरूप श्री सीसोदिया जी का स्थानान्तर आगरा जेल से बुलन्दशहर हो गया। और इन्होंने यहाँ भी अपना उसी प्रकार का पुरुषार्थ और श्री गुरुदेवजी की कृपा का ज्वलन्त उदाहरण हम सबके सम्मुख प्रस्तुत किया। बहिन सुशीलादेवीजी ने स्त्रियोंमें योग-प्रचार बढ़ाने

आरती हुआ करती थी। आरती के पश्चात् साध्य व असाध्य शारीरिक एवं मानसिक रोगियों का निदान एवं निःशुल्क यौगिक चिकित्सा का कार्यक्रम चलता था। इस कार्यक्रम के लिए आश्रम के ब्रह्मचारी केशवदेव जी २५० नेतियां तैयार करके लाए थे जो पहले दो दिन में ही समाप्त हो गई थीं। मानसिक रोगियों को, जिनमें भूत-प्रेत आदि व्याधियों से पीड़ितों की संख्या अधिक थी उन्हें केवल आनन्दकन्द करुणासागर श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में श्री गुरुदेव जी तेजोमय पुष्प प्रसाद अपने संकल्प के साथ देते जिसके परिणामस्वरूप सैकड़ों मानस रोगियों को तत्काल लाभ हुआ। अनेक मानस रोगियों के भूत-प्रेत आदि आनन्दकन्द गुरुदेव भगवान के दर्शनमात्र से ही दूर हो गये थे। इस कार्यक्रम के लाभ का सविस्तार वर्णन इस लेख में सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त शारीरिक रोगियों को भी नेति दुग्धपान- जलनेति, धौतकर्म, कपालभाति, नभोमुद्रा, जीवन-तत्त्व एवं आसन आदि क्रियाओं से अभूतपूर्व लाभ हुए। लाभ पाने वालों में से–तर्क की कसौटी पर परखने वाले वकील समुदाय एवं डाक्टरों को विशेष लाभ हुआ। अपराह्न १२ बजे से शाम के ३ बजे तक श्री महाराज जी का अपना निजी कार्यक्रम एवं एकान्तवास रहता था।

महिला-सत्संग

नित्य प्रति ३ बजे से महिला सत्संग प्रारम्भ हो जाया करता था। भटियाना की बहिन श्रीमती प्रेमवतीदेवी जी [धर्मपत्नी डा० श्री श्यामसिंह रावत, जो श्री, गुरुदेव भगवान से शक्तिपात योग दीक्षा प्राप्त कर भटियाने में विलक्षण प्रेमपूर्ण सत्संग की आयोजक हैं] महिला-सत्संग की अध्यक्षा रहीं, जिनके साथ भटियाने से आई बहिन शैलेश कुमारी एवं श्रीमती बहिन कमलेश्वरीदेवी के प्रभुभक्ति के भावों से पूरित भजनों ने प्रेम व भक्ति का एक विलक्षण वातावरण उपस्थित किया हुआ था। उनके वैराग्य युक्त सुन्दर पदों से मानव शरीर की नश्वरता, मन्त्र-जप और ध्यानाभ्यास की आवश्यकता का उत्तम अनुभव होता था। कुरुक्षेत्र से आई बहिन श्री वेदवतीदेवी जी, टपकरा से आई बहिन श्रीमती मोहिनीदेवी व रामरक्षादेवी ने अपने सुन्दर-सुन्दर भजनों से महिला सत्संग की शोभा को बढ़ाया व भक्त समुदाय को आत्म-विभोर बनाया। श्री भोलोदियाजी की सुपुत्री सुश्री आभारानी व उनके पतिदेव डा. केशव-जी ने श्री प्रभु-भक्ति के अति सुन्दर भजन गाकर गुरुदेव जी को प्रसन्न किया।

सायंकाल ६ बजे श्री महाराज जी बग्घी द्वारा भ्रमण को जाया करते थे। और लगभग ७ बजे लौट आया करते थे। लौटने के पश्चात् नैत्यिक कर्म के लिये प्रायः आठ बजे तक एकान्त में रहते थे।

आरती हुआ करती थी। आरती के पश्चात् साध्य व असाध्य शारीरिक एवं मानसिक रोगियों का निदान एवं निःशुल्क यौगिक चिकित्सा का कार्यक्रम चलता था। इस कार्यक्रम के लिए आश्रम के ब्रह्मचारी केशवदेव जी २५० नेतियां तैयार करके लाए थे जो पहले दो दिन में ही समाप्त हो गई थीं। मानसिक रोगियों को, जिनमें भूत-प्रेत आदि व्याधियों से पीड़ितों की संख्या अधिक थी उन्हें केवल आनन्दकन्द करुणासागर श्री प्रभुजी के चरण-कमलों से श्री गुरुदेव जी तेजोमय पुण्य प्रसाद अपने संकल्प के साथ देते जिसके परिणामस्वरूप सैकड़ों मानस रोगियों को तत्काल लाभ हुआ। अनेक मानस रोगियों के भूत-प्रेत आदि आनन्दकन्द गुरुदेव भगवान के दर्शनमात्र से ही दूर हो गये थे। इस कार्यक्रम के लाभ का सविस्तार वर्णन इस लेख में सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त शारीरिक रोगियों को भी नेति दुग्धपान- जलनेति, शीतकर्म, कपालभाति, नभोमुद्रा, जीवन-तत्त्व एवं आसन आदि क्रियाओं से अभूतपूर्व लाभ हुए। लाभ पाने वालों में मे-तर्क की कसौटी पर परखने वाले वकील समुदाय एवं डाक्टरों को विशेष लाभ हुआ। अपराह्न १२ बजे से शाम के ३ बजे तक श्री महाराज जी का अपना निजी कार्यक्रम एवं एकान्तवास रहता था।

महिला-सत्संग

नित्य प्रति ३ बजे से महिला सत्संग प्रारम्भ हो जाया करता था। भटियाना की बहिन श्रीमती प्रेमवतीदेवी जी [धर्मपत्नी डा० श्री श्यामसिंह रावत, जो श्री, गुरुदेव भगवान से शक्तिपात योग दीक्षा प्राप्त कर भटियाने में विलक्षण प्रेमपूर्ण सत्संग की आयोजक हैं] महिला-सत्संग की सञ्चालिका रहीं, जिनके साथ भटियाने से आई बहिन शीला कुमारी एवं श्रीमती बहिन कालेश्वरीदेवी के प्रभुभक्ति के भावों से पूरित भजनों ने प्रेम व भक्ति का एक विलक्षण वातावरण उपस्थित किया हुआ था। उनके वैराग्य युक्त सुन्दर पदों से मानव शरीर की नश्वरता, मन्त्र-जप और ध्यानाभ्यास की आवश्यकता का उत्तम अनुभव होता था। कुरुक्षेत्र से आई बहिन श्री वेदवतीदेवी जी, टुण्डला से आई बहिन श्रीमती मोहिनीदेवी व रामरखादेवी ने अपने सुन्दर-सुन्दर भजनों से महिला सत्संग की शोभा को बढ़ाया व भक्त समुदाय को आत्म-विभोर बनाया। श्री सीसोदियाजी की सुपुत्री सुश्री आशारानी व उनके पतिदेव डा. केशव-जी ने श्री प्रभु-भक्ति के अति सुन्दर भजन गाकर गुरुदेव जी को प्रसन्न किया।

सायंकाल ६ बजे श्री महाराज जी बग्घी द्वारा भ्रमण को जाया करते थे। और लगभग ७ बजे लौट आया करते थे। लौटने के पश्चात् नैत्यिक कर्म के लिये प्रायः आठ बजे तक एकान्त में रहते थे।

संगीत-कार्य क्रम

रात्रि के आठ बजे से संगीत कार्य-क्रम का बहुत ही सुन्दर आयोजन रहता था इसमें विशेष रूप से बहिन श्री उमा शर्मा आगरा ने अपने शास्त्रीय संगीत द्वारा कार्य-क्रम को चार चाँद लगा दिये। शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त बहिन उमा शर्मा श्री प्रभुजी के पवित्र लीला-चरित्रों को व्याख्यान पूर्वक भजनों में सुनाती थीं जिसकी प्रशंसा सभी भक्त-समाज ने गद्-गद कंठ होकर सरस भाव से की। बहिन उमा शर्मा का यह पुरुषार्थ बहुत ही सराहनीय था।

आरती-स्तुति

संगीत कार्य-क्रम के पश्चात् श्री योग-योगेश्वर महाप्रभु जी की दिव्य आरती हुआ करती थी। जिसमें श्री गुरुदेवजी की शक्तिपात के फलस्वरूप हजारों सत्संगी प्रेमियों में से अनेक बालक-बालिका, स्त्री-पुरुष ध्यानस्थ हो जाया करते थे जिनकी ध्यान-स्थितियों की विलक्षणता को देखकर बुलन्द-शहर में योग-जिज्ञासा की लहर दौड़ गई। और उपस्थिति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती ही चली गई। विशेष रूप से शिक्षित एवं विद्वत् समाज अधिक प्रभावित हुआ। इसी प्रभाव के फलस्वरूप बुलन्दशहर के १० दिन के प्रोग्राम में सेकड़ों ने श्री गुरुदेवजी से शक्ति-पात योग-दीक्षा प्राप्त कर अपने को धन्य किया।

प्रवचन

अन्त में श्री सद्गुरुदेवजी के अष्टांग योग एवं सिद्ध-योग सम्बन्धी सारगर्भित प्रवचन हुए।

श्री गुरुदेव जी ने क्रम से योगियों का कौन क्या है? इस पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला और वर्तमान में फैली हुई योग के प्रति जो भ्रांतिपूर्ण धारणा का निराकरण किया और सिद्धयोग का पूर्ण विवेचन किया। श्री महाराज श्री ने साधना के सभी मार्गों में योग की श्रेष्ठता को सिद्ध करते हुए आनन्दकंद योगयोगेश्वर भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी के इस अमर आदेश की पुनरावृत्ति की—

श्री गुरुदेव भगवान प्रवचन करते हुए

तपस्विभ्योऽधिको योगी
ज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी
तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

श्री महाराज जी ने भगवान श्री कृष्ण की इस चेतावनी पूर्ण आदेश की ओर भी संकेत किया कि यह मनुष्य शरीर नश्वर है और मनुष्य शरीर के रहते रहते यदि हम अपने कल्याण के लिये साधन नहीं करते तो हम आत्म हत्यारे ही हैं। यथा :—

बुलन्दशहर का यह १० दिवसीय योग प्रचार कार्यक्रम बड़ी धूम-धाम के साथ आशा और कल्पना से अधिक सफलता को प्राप्त हुआ।

व्यवस्था

व्यवस्था के विषय में जितना लिखा जाय थोड़ा है। इसलिये संकेत मात्र में ही लिखना पड़ रहा है। श्री गुरुदेव जी व उनके साथ आश्रम से आये शिष्यों के लिये बहिन सुशीलादेवी व श्री सीसोदिया जी ने अपनी कोठी प्रायः खाली कर रखी थी। इसके अतिरिक्त बाहर से आनेवाले सभी भाई बहिनों के लिये परिपूर्ण निवास एवं सुन्दर भोजन व्यवस्था थी। सामूहिक भंडारा ब्राह्मणों द्वारा संचालित था जिसमें पचासों व्यक्तियों का भोजन रोजाना बनता था। श्री गुरुदेवजी व उनके साथ आये हुए शिष्यों की भोजन-व्यवस्था अलग की गई थी। पूर्ण समुदाय के लिये प्रातः व दुपहर के जलपान की सुन्दर व्यवस्था थी। इस प्रोग्राम में श्री जेलर साहब के पूरे परिवार का परिश्रम सराहनीय था। बच्चा बच्चा श्री महाराज जी एवं सत्संगी समुदाय की सुव्यवस्था के लिए न्योछावर था। अपने परिवार की प्रतिष्ठा का लेशमात्र भी अहंकार किसी में दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था और आने वाले सत्संगियों की हर प्रकार से स्वागत सत्कार जेलर महोदय के सुपुत्र दिनेशकुमार एवं बहिन सुशीलादेवीजी के लघुभ्राता समशेरसिंह कर रहे थे। बहिन सुशीलादेवीजी प्रातः ४ बजे से रात्रि के १२ बजे तक अथक परिश्रम एवं बिना विश्राम के प्रबन्ध व देख-रेख में तत्पर रहती थीं।

विदाई

अन्त में विदाई की वेला भी आ ही गई। अपने प्राणप्रिय गुरुदेव भगवान को कौन विदा करना चाहेगा? किन्तु श्री महाराज जी को पूर्व निर्धारित प्रोग्राम के कारण विदाई करना ही था। विदाई के एक दिन पूर्व से ही सभी का हृदय

श्री गुरुदेव भगवान श्री हुकमसिंह सीसोदिया एवं उनके परिवार के साथ

विदाई की भावी आशंका से शिथिल हो चले थे। मंगलवार ता० २४ नवम्बर को मध्याह्न के समय श्री महाराज जी का सहारनपुर के लिये प्रस्थान प्रायः निश्चित था और इसी सूचना के अनुसार सैंकड़ों की संख्या में शिष्य अपरिचित एवं प्रेमी नागरिकों का विशाल जन-समूह विदाई के समय एकत्र हो गया था। कोई भी ऐसा व्यक्ति दृष्टि गोचर नहीं हो रहा था जिसकी आंखों में आंसू न हों। अतः मैं कर्त्तव्य-बन्धन से विवश होकर श्री दुष्यन्त-सिंह जी एवं बहिन सुशीलादेवी ने विदाई की आरती का दीपक प्रज्वलित किया। मन सभी के भरे हुए थे किन्तु फिर भी सब ने भावना से कर्त्तव्य को ऊँचा समझ कर श्री गुरुदेव भगवान की विधिवत् आरती पूजन व्यक्तिगत तिलक आदि सम्पन्न किया। पूजन करनेवालों का तांता दो घण्टे अनवरत चलता रहा। अन्त में द्वापरयुग के उस दृश्य की पुनरावृत्ति होती प्रतीत दिखाई दी जब गोकुल वासियों ने अक्रूर जी के साथ योगयोगेश्वर अखिल लोक पावन भगवान श्रीकृष्ण जी को मथुरा के लिये विदा किया था। श्री महाराज जी की सवारी को कोठी के द्वार से मुख्य द्वार तक पहुंचते-पहुंचते प्रायः १ घण्टे का समय लगा। वह करुणामय दृश्य ऐसा था कि पाषाण हृदय भी द्रवित हुए बिना नहीं रह सके। फिर विशुद्ध प्रेम के पुतले भाई श्री दुष्यन्तसिंह एवं बहिन सुशीला देवी जी के सम्पूर्ण परिवार के सदस्य जेल, का कर्मचारी समुदाय, सदियाना मण्डल एवं शहर के प्रायः सभी सत्संगी प्रेमी बिलख-बिलख कर रो रहे थे भाग्य की विडम्बना कितनी विचित्र है कि जिस विदाई द्वारा से बुलन्दशहर के हजारों नर-नारी बिलख-बिलख कर रो रहे थे उसी समय श्री गुरुदेवजी की विदाई का समाचार पाकर सहारनपुरवासी प्रसन्नता से ओत-प्रोत थे। जैसे ही सहारनपुर के सत्संगियों को ट्रंक काल के द्वारा श्री गुरुदेव भगवान के प्रस्थान की सूचना दी गई त्योंही श्री महाराज जी ने बुलन्दशहर से प्रस्थान कर दिया। उपरोक्त शेष रूप से यहां हजारों नर-नारियों ने गुरुदेव भगवान को भाव-भीनी विदाई दी और प्रायः शहर के छोर तक ही विदा करके लौटे।

मेरी भव बाधा हरो, राधा नागर सोय।
जा तन की झांई परे, श्याम हरित दुति होय॥

—बिहारीलाल

सचित्र योगासन और उनके लाभ

[श्री गुरुदेवजी की पवित्र वाणी से]

गर्भासन

विधि :— उपरोक्त आसन को उसी प्रकार लगा कर पेट और गर्दन पैरों से थोड़ा ऊँची कर ऊपर को थोर निकाल लें, अपने दोनों हाथों को नीचे की ओर कटि प्रदेश में ले जाकर परस्पर अंगुलियों में अंगुली डालकर पकड़े रहें । इसी का नाम गर्भासन है । वस्तुतः गर्भ में बच्चा इसी रूपक से रहता है, इसी कारण इसे गर्भासन कहते हैं ।

लाभ :— इस आसन में पूर्वोक्त एक पाद शिरासन द्विपाद शिरासन आदि में जो लाभ बतलाये गये हैं वे सब इस आसन के करने से होते हैं । इसके अतिरिक्त उदर रोगों पर अधिक प्रभाव पड़ता है क्योंकि इससे पेट बिल्कुल सिकुड़ा रहता है । अतः पेट में वायु नहीं बनती । यकृत, प्लीहा पक्वाशय में अपना कार्य ठीक सम्पन्न करते हैं । जठराग्नि बढ़ती है । इन सब आसनों के करने के बाद थोड़ा विश्राम लेकर एक बार धनुरासन अवश्य कर लेना चाहिये । इसके करने से सब स्नायुओं में एक बार प्रबल तनाव आ जायेगा । इससे उत्तम प्रभाव रहेगा ।

समय :— शनैः-शनैः बढ़ाना चाहिये व २ मिनट तक करना चाहिये ।

धनुरासन

प्रासार्य पादौ भुवि दण्डरूपौ करौ च पृष्ठ धृतपाद युग्मम् ।
कृत्वा धनुस्तुल्य विवर्तितांगम निधाय योगी धनुरासन तत् ॥

विधि :— अपने दोनों पैरों को पसार करके साधक उल्टा लेट जाय व घुटनों के पास से अपने दोनों पैरों को सिर की ओर मोड़े, उधर अपने दोनों हाथों को उल्टा कर दोनों पैरों को पकड़ कर ऊपर की ओर तनाव देकर तन जाय । इसी का नाम धनुरासन है ।

लाभ :— यह आसन शरीर मान को बढ़ाता है । जठराग्नि प्रदीप्त करता है ।

समय :— प्रथम कुभ्यास में अधिक देर न करके थोड़ा थोड़ा ही अभ्यास करना चाहिये ताकि किसी स्नायु पर एक दम अधिक तनाव न पड़े ।

बकासन

विधि :— हम एक और बकासन पहले लिख चुके हैं, इस आसन में बकाकृति बनती है, आसन पूर्वोक्त रीति से बना ही रहने दें केवल मात्र जो हाथ छाती पर नमस्कार जोड़े हुऐ हैं उनको वहां से हटाकर नितम्ब भाग के पास लाकर जमीन में जमा दें व बाजुओं के बल से शरीर को ऊपर की ओर उठा दें बस इसी का नाम बकासन है । सामने से देखने वालों को बिल्कुल बक ही दिखाई देगा ।

समय :— शनैः-शनैः अभ्यास बढ़ाना चाहिये ।

लाभ :— इस आसन के करने से भुजदण्ड पुष्ट होते हैं । इस रूपक से चलने का भी प्रयत्न किया जा सकता है । यह और भी लाभप्रद है ।

आकर्ण धनुरासन

पादांगुष्ठौ तु पाणिभ्यां गृहीत्वा श्रवणावधि ।
धनुराकर्षणं कुर्यांद्धनुरासन मुच्यते ॥

विधि :— दोनों पैरों को एक साथ मिलाकर जमीन पर लम्बे फैला दें व उसके बाद दोनों हाथों की अंगुलियों से दोनों पैरों के अंगूठों को पकड़ लें पैरों के अंगूठे विपरीत क्रम से पकड़ें अर्थात् दाहिने हाथ से बांयें पैर के अंगूठे को व बांयें हाथ से दांयें पैर को। उसी प्रकार अंगूठा पकड़े हुए फैला रहने दें व उसके विपरीत दूसरे पैर के अंगूठे को कान तक खींच कर ले जायें जिस प्रकार बाण छोड़ने के समय धनुष का आकर्षण किया जाता है। उसी प्रकार उस पैर को भी खींचे। इसी का नाम आकर्ण धनुरासन है। इस आसन को भी इसी विधि के अनुसार बदल-बदल कर दोनों ओर से करना चाहिये ताकि तनाव समान भाव से दोनों पर बराबर पड़े। इस आसन को और भी कई प्रकार से किया जाता है। जैसे बांयें हाथ से बांयां पैर का अंगूठा कान से लगायें व दाहिना पैर के अंगूठे को उसी हाथ से पकड़ कर कान से लगावें व बांयें पैर को उसी प्रकार फैला रहने दें इत्यादि सभी विधियां ठीक हैं। स्नायुमण्डल पर दबाव पड़ना चाहिये जिससे उन्नत स्वास्थ्य लाभ हो।

लाभ: — इस आसन के करने से बांह, जंघा, घुटने के स्थानों पर पूरा तनाव पड़ता है व वहां के स्नायुओं में अच्छी उत्कृष्ट प्रगति होती है। दोनों ओर बराबर पुष्टि देता है।

श्री गुरुदेवजी के आगामी कार्य-क्रम

दिनांक	कार्यक्रम
५—१—७१ से ११—१—७१ तक	काशी हिन्दू विश्व विद्यालय वाराणसी में योग-प्रचार कार्यक्रम पता :—द्वारा श्री काशीनरेशलाल कुलसचिव का. हि. वि. विद्यालय वाराणसी-५
१२—१—७१	अर्ध कुम्भ प्रयाग के लिये प्रस्थान
१३—१—७१ से ३१—१—७१ तक	अर्ध कुम्भ प्रयाग में योग-प्रचार कार्यक्रम पर्व स्नान :— १४ जनवरी मकर संक्रांति २३ जनवरी एकादशी २६ जनवरी मौनी अमावस्या ३१ जनवरी बसंत पता :— द्वारा डा० बी. पी. जौहरी १३५ अलोपीबाग, इलाहाबाद
३१—१—७१	रात्रि को धनबाद के लिये प्रस्थान
१—२—७१ से ७—२—७१ तक	धनबाद में योग-प्रचार कार्यक्रम पता :— द्वारा श्री रामधनदास तेजनारायन अग्रवाल पो. कुसुण्डा धनबाद (बिहार)
८—२—७१	दुर्गापुर के लिये प्रस्थान
९—२—७१ से १८—२—७१ तक	दुर्गापुर में योग-प्रचार कार्यक्रम पता :— द्वारा श्री रमेशचन्द दीक्षित एल । ९६ सागर भंगा कालोनी दुर्गापुर ११ (बर्द्धवान)

नोट—उपरोक्त कार्यक्रम प्रायः निश्चित् हैं किन्तु किन्हीं विशेष परिस्थिति वश श्री गुरुदेवजी की आज्ञानुसार परिवर्तन भी किया जा सकता है।

—व्यवस्थापक

❀ श्री रामलाल प्रभवेनमः ❀

आवश्यक-सूचना

धनबाद (बिहार)

में

योग-प्रचार-समारोह

सभी सत्संगी भाई-बहिनों को सूचना देते हुए मुझे परम हर्ष हो रहा है कि हमारी विनम्र प्रार्थना को स्वीकार करके श्री सद्गुरुदेव अनन्त कोटि योगेश्वर श्री चन्द्रमोहनजी महाराज ने परम करुणापूर्वक धनबाद के लिये अपना योग-प्रचार कार्यक्रम निश्चित कर दिया है। श्री महाराजजी अपने निश्चित कार्यक्रमानुसार १-२-७१ को अर्द्ध कुम्भ प्रयाग (इलाहाबाद) से धनबाद पहुंचेंगे। श्री महाराज जी का धनबाद में योग-प्रचार कार्यक्रम १-२-७१ से ७-२-७१ तक अनवरत चलेगा।

अतः भिन्न-भिन्न प्रान्तों के निवासी सत्संगी भाई-बहिनों से नम्र निवेदन है कि इस शुभ अवसर पर पधार कर अनुगृहीत करें एवं सत्संग का लाभ ग्रहण करें।

निवेदक :—

लाला रामधनदास तेजनरायन

दरी मोहल्ला, धनबाद

(बिहार)

कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसई मार्ग, राजगंज-आगरा-२

❁ श्री रामलाल प्रभवेनमः ❁

आवश्यक-सूचना

दुर्गापुर (बंगाल)

में

योग-प्रचार-समारोह

सभी सत्संगी भाई-बहिनों को सूचना देते हुए मुझे परम हर्ष हो रहा है कि हमारी विनम्र प्रार्थना को स्वीकार करके श्री सद्गुरुदेव अनन्त कोटि योगयोगेश्वर श्री चन्द्रमोहनजी महाराज ने परम करुणापूर्वक दुर्गापुर के लिये अपना योग-प्रचार कार्यक्रम निश्चित् कर दिया है। श्री महाराजजी अपने निश्चित् कार्यक्रमानुसार ८-२-७१ को धनबाद से दुर्गापुर पहुंचेंगे। श्री महाराजजी का दुर्गापुर का योग-प्रचार कार्यक्रम ८-२-७१ से १७-२-७१ तक अनवरत चलेगा।

अतः भिन्न-भिन्न प्रान्तों के निवासी सत्संगी भाई-बहिनों से नम्र निवेदन है कि इस शुभ अवसर पर पधार कर अनुग्रहीत करें एवं सत्संग का लाभ ग्रहण करें।

निवेदक :—

रमेशचन्द्र दीक्षित

एल-९६ सागर भंगा, कालोनी

दुर्गापुर-११, जिला-बर्दवान

कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसई कलाँ, ताजगंज-आगरा-१